जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2528

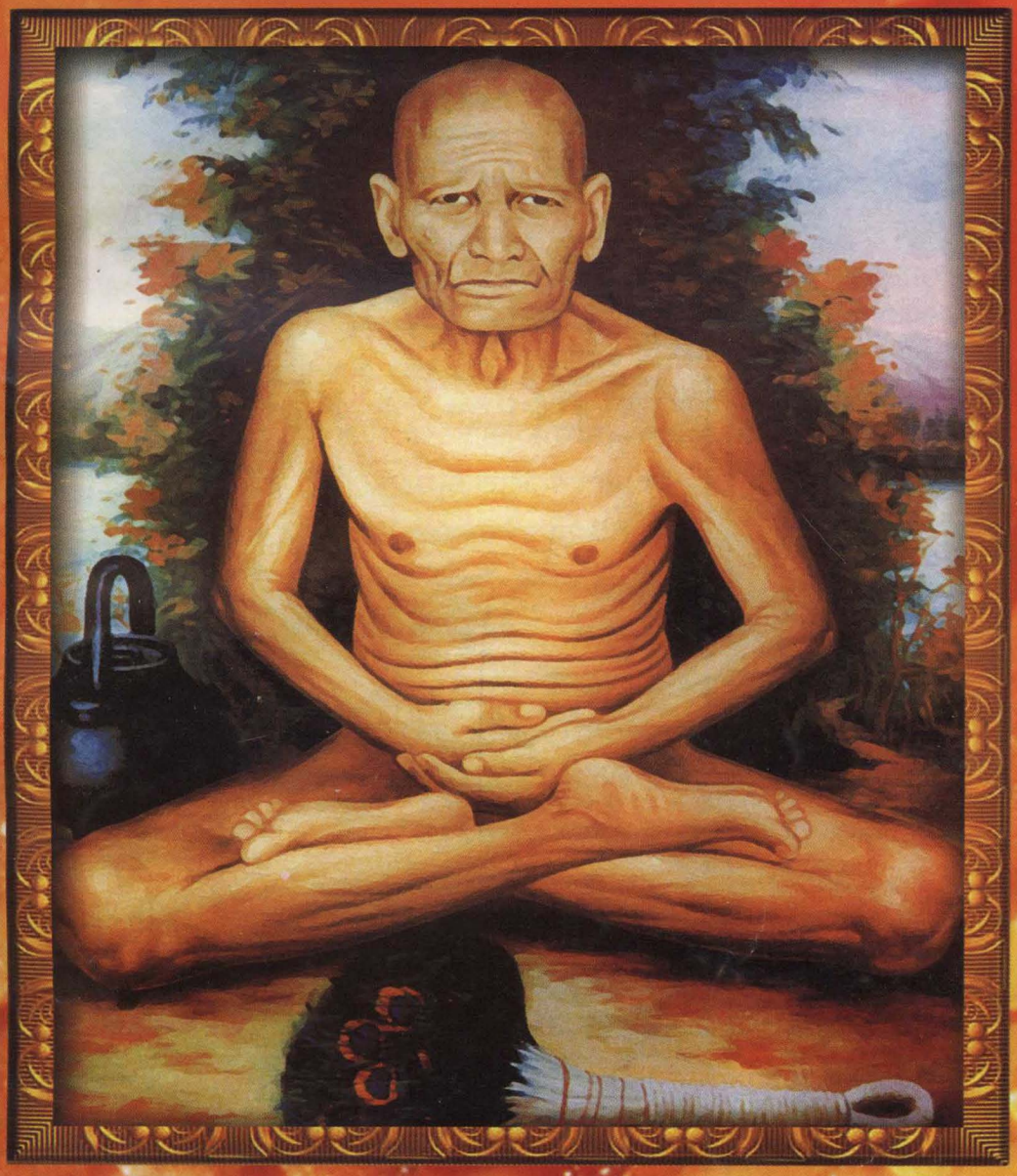

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का 30वाँ समाधिदिवस

ज्येष्ठ, वि.सं. 2059 जून 2002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2002

जिनभाषित

जून 2002

मासिक

वर्ष 1, अङ्क 5

सम्पादक
डॉ. रतनचन्द्र जैन

कार्यालय
137, आराधना नगर,
भोपाल- 462003 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-776666

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया
पं. रतनलाल बैनाड़ा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश राणा, जयपुर

द्रव्य-औदार्य
श्री गणेशप्रसाद राणा
जयपुर

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428, 352278

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

- **आपके पत्रः धन्यवाद** 1
- **सम्पादकीय** : महाकवि आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का 30वाँ समाधि दिवस 4
- **लेख एवं पूजा**
  - आचार्य श्री ज्ञानसागर की जीवन यात्रा : निहालचन्द्र जैन 6
  - आचार्य ज्ञानसागर जी की साहित्यसाधना : मुनि श्री क्षमासागर जी 9
  - आचार्य ज्ञानसागर के विपुल साहित्य पर हुए एवं हो रहे शोधकार्य : डॉ. शीतलचन्द्र जैन 13
  - वीतरागता की पराकाष्ठा : मुनि श्री क्षमासागर जी 15
  - भूरामल से ज्ञानसागर : 'आत्मान्वेषी' से 17
  - आचार्य ज्ञानसागर जी की पूजा : मुनि श्री योगसागर जी 18
  - आचार्य ज्ञानसागर जी का हिन्दी साहित्य वर्तमान सन्दर्भ में : डॉ. राजुल जैन 19
  - श्रुतपञ्चमी : हमारे कर्त्तव्य : पं. सुनील 'संचय' शास्त्री 21
  - चिन्तन से श्रेष्ठ विचार प्रकट होते हैं : डॉ. नरेन्द्र जैन भारती 22
- **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 23
- **बारह भावना** : हिन्दी अर्थ : ब्र. महेश जैन 25
- **प्राकृतिक चिकित्सा** : दमा का उपचार : डॉ. रेखा जैन 27
- **बालवार्ता** : सजा किसे ? : डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' 20
- **कविताएँ**
  - जीवन धन : डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' 26
  - हाशिये की उम्र पाकर : अशोक शर्मा 28
  - राजुल गीत : श्रीपाल जैन 'दिवा' 28
  - निर्ग्रन्थ दशा में ही अहिंसा पलती है : आचार्य विद्यासागर जी आवरण पृष्ठ 3
  - ठण्ड : सरोज कुमार आवरणपृष्ठ 3
- **समाचार** 5, 12, 29-32

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

'जिनभाषित' की नियमित प्राप्ति पत्रिका जगत की एक बड़ी उपलब्धि है। पत्र-पत्रिकाओं के प्रति जन साधारण की अरुचि में सबसे बडा कारण उनकी अनियमितता ही है। सो यहाँ नहीं है। मई अंक में सम्पादकीय लेख 'दोनों पूजा-पद्धतियाँ आगमसम्मत,' जैनधर्म की ऐतिहासिकता, पाउचों की सुन्दरता में मीठा जहर पानमसाला, प्राकृतिक चिकित्सान्तर्गत स्वास्थ्य और सौन्दर्यनाशक मोटापा आलेख विशेष उपयोगी लगे हैं। पत्रिका निरन्तर प्रगति पथ पर अग्रसर रहे, ऐसी शुभभावना है।

पं. पवन कुमार जैन शास्त्री
प्राध्यापक-श्री गो.दि. जैन सिद्धान्त
संस्कृत महाविद्यालय
मुरैना (म.प्र.)-476001

मई, 2002 की जिनभाषित पत्रिका प्राप्त हुई। इसमें सम्पादकीय लेख ''दोनों पूजा-पद्धतियाँ आगमसम्मत'' दर्शाकर लेखक ने स्याद्वाद पद्धति से वर्षों से चली आ रही तेरहपंथी और बीसपंथी मान्यता वालों के मध्य व्याप्त कटुता और अहं भावना को हल करने का एक अच्छा सकारात्मक प्रयास किया है, इससे एक ओर जहाँ समाज में विघटन की प्रवृत्ति पर रोक लगेगी, वहीं दूसरी ओर समरसता का प्रवाह भी होगा।

श्री कैलाश मडवैया का लेख ''जैन धर्म की ऐतिहासिकता'' उन लोगों के गाल पर करारा तमाचा है, जो बिना गहन-अध्ययन किए ही पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर जैन धर्म की प्राचीनता के बारे में कुछ भी ऊल-जलूल लिखते रहते है। मेरा सुझाव है कि यह लेख प्रत्येक जैन समाज के व्यक्ति को अवश्य पढ़ना चाहिए ताकि वह जैनधर्म की प्राचीनता से न केवल परिचित हो सके, बल्कि समय आने पर उन लोगों को प्रमाणसहित सटीक उत्तर भी दे सके, जो अपनी अल्पज्ञता के कारण जैनधर्म को या तो बौद्धधर्म की शाखा बताते हैं या फिर जैन तीर्थंकरों के इतिहास को मनगढ़ंत बताते हैं।

पाउचों की सुन्दरता में मीठा जहर के माध्यम से श्रीपाल जी 'दिवा' ने सामान्यजन को सचेत किया है। यह लेख उन लोगों को अवश्य पढ़ाया जाना चाहिए, जो पाउचों का अंधाधुन्ध सेवन करके अपने कीमती जीवन को स्वयं ही मृत्यु के मुँह में ढकेल रहे हैं।

जिज्ञासा-समाधान में श्री बैनाड़ाजी की सलाह से मैं कतई सहमत नहीं हूँ। उन्होंने श्वेताम्बरों द्वारा तैयार की गई कैसेट 'भक्तामर स्तोत्र' को सिर्फ इसलिए हटा देने की बात कही है कि उसमें 48 के बजाए 44 काव्य हैं। मेरा यह कहना है कि बजाए इस कैसेट को हटाने के, हम भी (दिगम्बर जैन समाज के लोग) भक्तामर की ऐसी सुरीली एवं मधुर आवाज में कैसेट तैयार करें तो यह एक सकारात्मक एवं प्रशंसनीय कदम होगा। अभी पिछले पर्युषण पर्व के अवसर पर श्वेताम्बर जैन समाज द्वारा तैयार किया गया 'भक्तामर स्तोत्र' का आडियो-विडियो कैसेट जीटी.वी. द्वारा पूरे एक घंटे तक रोज पर्युषणपर्व में दिखाया जाता रहा, जिसे पूरे देश और विदेश के लोगों ने देखा और जैनधर्म की प्रभावना हुई, परन्तु दिगम्बर जैन समाज ने क्या किया? कभी इस पर भी हम विचार करें। एक ओर हम जैनधर्म को विश्वधर्म कहते हैं और दूसरी ओर उसके प्रचार-प्रसार के लिए आधुनिक मीडिया से परहेज करते हैं। हमें तो पंचकल्याणक एवं गजरथ जैसे आयोजनों में ही विश्वकल्याण दिखाई देता है। क्या कभी हमने इस बात का भी लेखा-जोखा किया है कि इतने पंचकल्याणक होने के बावजूद विश्व का कितना कल्याण हुआ अथवा जैनधर्म का कितना प्रचार-प्रसार हुआ? हाँ, इन आयोजनों से पंचों का कल्याण जरूर हो जाता है।

अन्त में, शिखरचंद जी का हास्य-व्यंग्य लेख ''लो, मैं आ गया'' काफी रोचक लगा। स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेने के बाद कर्मचारी को जिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, उसका हुबहू चित्रण करके शिखरचंद जी ने पाठकों को काफी गुदगुदाया है। पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना सहित।

विनोद कुमार 'नयन'
एल.आई.जी.-24
ऐशबाग स्टेडियम के पास
भोपाल (म.प्र.)

'जिनभाषित' का अप्रैल 2002 अंक प्राप्त हुआ। नैनागिरि मंदिर का अति सुन्दरचित्र मुखपृष्ठ पर छाप कर आपने पत्रिका की सुन्दरता में चार चाँद लगा दिये हैं। इससे सम्बन्धित लेख भीतर के पृष्ठों में देखने को मिला श्री सुरेश जैन द्वारा लिखित। एक से बत्तीस तक के पृष्ठों में पहले किसे पढ़ा जाए और बाद में किसे, इसके चयन में ही मुझे कई मिनिट का समय लगा। सारे पृष्ठों की सामग्री एक से बढ़कर एक लगी।

लेख चाहे तीर्थंकर महावीर से सम्बन्धित हो या शाकाहार से या प्राकृतिक चिकित्सा से अथवा नवनिर्माण से, सभी का अपना महत्त्व तथा प्रसंग है। छोटी-छोटी कविताओं से पत्रिका की उपयोगिता बढ़ जाती है। इन सभी के पीछे आपका तथा समस्त 'जिनभाषित' परिवार का स्तुत्य प्रयास है और यही वह चीज है जिसकी कमी कई जैन पत्र-पत्रिकाओं में खलती है। मेरी ऐसी कल्पना है कि 'जिनभाषित' एक दिन जैन और अजैन सभी के बीच सर्वप्रिय पत्रिका बन कर रहेगी।

डॉ. विनोद कुमार तिवारी
रीडर, इतिहास विभाग
यू.आर.कालेज
रोसडा (बिहार)-848210

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जिनभाषित' का अप्रैल अंक प्राप्त कर प्रसन्नता हुई। महावीर को बहुत पढ़ा-सुना-गुना गया। अब उनको जीने का युग आ गया है। आज जो महावीर को नहीं जीयेगा, वह जीवन के अभीष्ट से वंचित रहेगा। महावीर को कैसे जिया जाए, 'जिनभाषित' इसी संदर्भ को स्पष्ट करने का युगोचित प्रयत्न कर रहा है और तदनुकूल सामग्री का परिवेषण भी इसके द्वारा तत्परतापूर्वक किया जा रहा है। इससे जैनाजैन पाठकों को ज्ञानोन्मेषकारी अभिनव दृष्टि प्राप्त हो रही है।

पं. रतनलाल जी बैनाड़ा द्वारा प्रस्तुत 'जिज्ञासा-समाधान' उनकी आर्हत् दार्शनिक दृष्टि की गम्भीरता का परिचायक है। उनकी चिन्तन-मनीषा नमस्य है। साधुवाद सहित।

डॉ. श्री रंजन सूरिदेव
पी.एन. सिन्हा कॉलोनी,
भिखनापहाडी, पटना - 800 006

'जिनभाषित' वर्ष -1, अंक-3, अप्रैल 2002 के संपादकीय में आपकी तथ्यात्मक प्रस्तुति पाठकों में सामाजिक चेतना का संचार करती है। आपकी अभिव्यक्तियाँ अत्यधिक शोधपूर्ण, प्रेरणास्पद एवं अनुकरणीय है। आध्यात्मिक जगत की इस साफ-सुथरी पत्रिका ने बहुत कम अवधि में ही अपनी स्वतंत्र पहचान स्थापित कर ली है।

इस अंक में प्रकाशित पूज्य गुरुजनों ने अपने लेखों में अपनी अनुभूतियों और भावनाओं का प्रभावी ढंग से प्रस्तुतीकरण कर जैन संस्कृति की गरिमा को वृद्धिगत किया है।

छतरपुर स्थित स्नातकोत्तर महाविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. सुमति प्रकाश जैन के मार्गदर्शन में लिखित सुश्री रजनी जैन का आलेख 'शाकाहार एवं मांसाहार : एक तुलनात्मक आर्थिक विश्लेषण' आर्थिक एवं वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। जैन गजट 9 मई, 2002 से जानकारी मिली है कि डॉ. जैन के निर्देशन में कु. श्वेता जैन ने भी 'भारतीय अर्थव्यवस्था में शाकाहार की उपादेयता : एक मूल्यांकन' विषय पर लघु शोधप्रबंध प्रस्तुत कर एम.कॉम. की प्रावीण्य सूची में प्रथम स्थान प्राप्त किया है।

भारतीय आहार की प्रणालियों एवं रहन-सहन की पद्धतियों का राष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानिक/आर्थिक शोध अत्यावश्यक है। इस दिशा में किए गए सराहनीय प्रयास के लिए युवा प्राध्यापक डॉ. जैन और दोनों युवा शोध छात्राएँ रजनी एवं श्वेता बधाई के पात्र है। यह आवश्यक है कि हमारा आध्यात्मिक एवं सामाजिक नेतृत्व ऐसे प्राध्यापकों एवं छात्रों को इस प्रकार के शोधों के लिए प्रभावी ढंग से प्रेरित करे, जिससे वे विश्व के समक्ष अपने वैज्ञानिक जीवनमूल्यों को आधुनिक ढंग से प्रस्तुत करने में सफल हो सकें।

प्राचार्य निहालचन्द्र जैन ने भगवान महावीर द्वारा उपदेशित शाश्वत जीवन मूल्यों को सहज एवं सरल ढंग से आधुनिक भाषा में प्रस्तुत किया है। शास्त्रीय एवं तकनीकी भाषा का मोह छोड़कर प्राचार्य जी द्वारा की गई समता, सहअस्तित्व, संयम एवं आत्म-स्वातंत्र्य जैसे व्यावहारिक मूल्यों की प्रस्तुति अत्यधिक सराहनीय है। सामान्य व्यक्ति सरलता एवं सहजता से इन बिन्दुओं को समझकर और विवेक के साथ पालन कर अपनी भौतिक, शारीरिक, भावनात्मक एवं आत्मिक प्रगति कर सकता है।

मुझे विश्वास है कि ऐसे लेखों के माध्यम से जिनभाषित पत्रिका सदैव अपनी उत्कृष्ट छवि बनाए रखेगी।

सुरेश जैन
आई.ए.एस.
30, निशात कालोनी
भोपाल (म.प्र.)

किसी-किसी जातक का उदय ब्राह्ममुहुर्त जैसे शुभ मुहूर्त और लग्न में होता है तो वह जातक 'जिनभाषित' जैसा सर्वहितकारक और मार्गदर्शक बनता है। नि:सन्देह 'जिनभाषित' के मनीषी स्वाध्यायी, चिन्तक, सम्पादक डॉ. रतनचन्द्र जैन ने इसे सिद्ध भी कर दिया है। 'जिनभाषित' के अग्रलेख अपूर्व, असाधारण और प्रभावक होते हैं। फरवरी से मई, 2002 के सभी अंकों की सामग्री को ध्यानपूर्वक पढ़ा है। समीक्षा में कुछ कहना हो तो 'तुलसी' से कहलाना पडेगा- 'को बड़-छोट कहत अपराधू'.....। सब-कुछ तो सम्पादक द्वारा जाँचा-परखा और चुनिंदा संचयन में हैं, फिर भी मेरा अन्त:करण ' जिनभाषित' के अग्रलेख ''नई पीढ़ी धर्म से विमुख क्यों ?'' पर सम्पादक को बधाइयाँ देने को बाध्य कर रहा है। इसमें लेखक की सूक्ष्म दृष्टि, अनुभव की गहनता और मानस-मन्थन से निकला नवनीत है। मैं समझता हूँ इस लेख के मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर पुरानी पीढ़ी के धर्म-धुरन्धरों को अपनी सन्तति को निहारना चाहिए। तब ''दूध का दूध और पानी का पानी'' दृष्टिगोचर हो जाएगा। इसी प्रकार मार्च के अंक में एक उपयोगी और सामयिक लेख है - ''आहारदान की विसंगतियाँ।'' अब हमारे साधकों के चार्तुमास की स्थापनाओं के दिवस आने वाले हैं। किसी समर्थ पाठक-दातार द्वारा यदि उन-उन स्थानों पर इस लेख की प्रतियाँ छपवाकर गृहस्थों-श्रोताओं आदि में वितरित कराई जावें तो कुछ न कुछ सुधार की संभावनाएँ हैं। लेख में कोई अत्युक्ति नहीं है।

इस प्रकार सभी अंकों में उपयोगी सामग्री है। सबके सन्दर्भ में लिखना एक नया लेख बनाने जैसा हो जावेगा।

हृदय की शल्यचिकित्सा (बाईपास सर्जरी) के बाद की प्रक्रिया ने प्राप्ति स्वीकृति से वंचित रखा। 'भोपाल की धरती पर लोकोत्तर आत्मा के चरण' और जिनभाषित के माध्यम से उन चरणों की रज हम पाठकों तक पहुँचाने के लिये पुन: आप के आभारी।

डॉ. प्रेमचन्द्र जैन
3118/71 एस.ए.एस. नगर,
चण्डीगढ़ - 160071

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'जिनभाषित' मई, 2002 अंक मिला। नवीन साजसज्जा से परिपूर्ण, धर्ममय, ज्ञानवर्धक लेखों के साथ प्रकाशित पत्रिका के सफल सम्पादन हेतु मेरी अनेकानेक बधाइयाँ स्वीकार कीजिये।

इस पत्रिका का कवरपृष्ठ देखकर ही उस पावन तीर्थक्षेत्र के साक्षात्दर्शन हो जाते हैं, मानों उसी क्षेत्र पर बैठे हों। इस पत्रिका की प्रतीक्षा नया माह शुरु होते ही पूरे परिवार के लोग करने लग जाते हैं। मैंने पहले कभी इतना आकर्षण किसी अन्य पत्रिका के लिए नहीं देखा।

पत्रिका का ''शंका-समाधान'' निश्चय ही हम लोगों को नई दिशा प्रदान करेगा। यह पत्रिका दिन-रात प्रगति करती रहे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

कमल कुमार राँवका
महावीर किराना स्टोर, स्टेशन बाजार,
रेनवाल - 303603, जयपुर (राज.)

पत्रिका सम्पूर्णत : अच्छी एवं संग्रहणीय है। विशेष रूप से इसके सप्रमाण सम्पादकीय लेख पत्रिका की जान हैं। पत्रिका मिलते ही कितनी ही व्यस्तता हो, सम्पादकीय लेख से शुरुआत करके पूरी पत्रिका एक ही बार में पढ़ने का प्रयास रहता है।

श्री विद्यासागर जी के आशीर्वाद से युक्त संस्था भाग्योदय हॉस्पिटल का लेख देखा, किन्तु उसमें मोटापा घटाने के लिए- लहसुन का प्रयोग बताया गया है, जबकि जैन परिवारों में लहसुन का प्रयोग नहीं होता है।

अभक्ष्य के प्रयोग की सलाह कृपया न दी जावे, वह भी ऐसे संस्थान से और ऐसी पत्रिका में। कृपया ध्यान देवें।

उपेन्द्र नायक
रानीपुर (झाँसी) उ.प्र.

करीब 7 माह पूर्व आपके द्वारा संपादित 'जिनभाषित' का अपनी (84) आयु तथा पत्रिका की (प्रथम) 1 वर्ष की आयु देखकर मात्र 1 वर्ष के लिए सदस्य बना था। कहना न होगा, कई पत्र-पत्रिकाएँ (सभी जैन) आती हैं, उनमें से कुछ तो पढ़ी भी नहीं जातीं, परन्तु इस पत्रिका ने 7 माह में ही एक विशिष्ट रुचि बना दी है।

पत्रिका में निरन्तर निखार देख रहा हूँ। सम्पादकीय, आचार्यवर विद्यासागर जी के संघस्थ मुनिगण के लेख व समाचार तथा पं. रतनलाल जी बैनाड़ा द्वारा 'जिज्ञासा-समाधान' विशेष रुचिकर लगते हैं।

प्रेमचन्द रपरिया
फिरोजाबाद (उ.प्र.)

'जिनभाषित' का अप्रैल 2002 का अंक मिला। सामग्री का चयन अत्यंत प्रशंसनीय है। 'भ. महावीर का सन्देश' 'तीर्थंकर महावीर: जीवन दर्शन' 'भ. महावीर की प्रासंगिकता' 'आप नव निर्माण से परेशान है या ध्वंसात्मक विचार से ?' इत्यादि लेख समाज और व्यक्ति को जीवनी शक्ति देने की सामर्थ्य रखते हैं। प्रत्येक ''काव्य'' मनोज्ञ है।

मैंने अपनी आलोचना में लिखा था कि ''संस्कृत दर्शन पाठ'' के दसवें पद्य में -

''जिनधर्म विनिर्मुक्तो मा भूवं चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः॥

इस प्रकार पाठ होना चाहिये, क्योंकि दसवें पद्य में- 'सदा मे ऽस्तु' है और अन्तिम पद्य में ''प्रतिभासते मे'' दिया गया है। अत: पद्य का अर्थ निम्न प्रकार होगा-

''मैं जैनधर्म से रहित चक्रवर्ती भी नहीं बनना चाहता। यदि दरिद्र और दीन दास भी बनूँ , तो जैनधर्म से सहित बनना चाहता हूँ।''

अत: अर्थ करते समय ''अहम्'' का कर्ता के रूप में ध्यान रखना आवश्यक है। अत: ''भूल सुधार'' को स्थान दें।

प्रो. हीरालाल पांडे शास्त्री
7 लखेरापुरा, भोपाल (म.प्र.)

आपके द्वारा सम्पादित 'जिनभाषित' के फरवरी-मार्च अंक मिले। पत्रिका में सामग्री का चयन उद्देश्यानुसार किया है। सामग्री प्रेरक, ज्ञानवर्धक है। फरवरी माह का सम्पादकीय समाज के द्वैधचिंतन के गम्भीर परिणामों का संकेत करता है। हमारे निजी जीवन में जब तक निर्मलता-निष्कपटता का समावेश नहीं होता, तब तक सभी धार्मिक क्रियाएँ प्रदर्शनमात्र सिद्ध होगीं, हो रही हैं ? कथित धर्मात्मा महानुभाव आपकी पीड़ा को समझेंगे, ऐसी आशा है।

मार्च अंक संग्रहणीय, पठनीय एवं विचारणीय है। बहुत विचारोपरान्त इसी अंक की प्रतिक्रिया में पत्र लिखने बैठ गया। ब्र. महेश जैन बधाई के पात्र है, जो 'आहारदान की विसंगतियाँ' जैसे विषय को प्रकाश में लाये। आलेख मनोयोगपूर्वक पढ़ा। अतिथि संविभाग व्रत के अंतर्गत श्रावक का साधुजनों के प्रति जो कर्त्तव्य है, उसकी घोर उपेक्षा सहज ही दृष्टिगोचर हो रही है। अध: कर्म की अवधारणा आहत हुई है।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
अमलाई

'जिनभाषित' पत्रिका बराबर प्राप्त हो रही है। अल्पज्ञान एवं कम उम्र के हिसाब से मैं इतना ही कह सकता हूँ कि इस पत्रिका में आज के भौतिक युग के अनुरूप समयानुकूल और सारगर्भित तथ्यों का समावेश है। मुद्रण, शब्दों का चयन अतिउत्तम है। 'जिज्ञासा-समाधान' सामान्य जनसाधारण के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी स्तम्भ है।

पत्रिका निरन्तर प्रगति करते हुए उच्चतम ऊँचाइयों को प्राप्त करें, इन्हीं भावनाओं के साथ।

शरद जैन
47, मारवाडी रोड, भोपाल (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपादकीय

महाकवि आचार्यश्री ज्ञानसागर जी का 30वाँ समाधिदिवस

संस्कृत के महाकवि आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज लोकोत्तर शिष्य (आचार्य श्री विद्यासागर जी) के लोकोत्तर गुरु थे। कृति की श्रेष्ठता कर्त्ता की श्रेष्ठता का अनुमान करा देती है। आचार्य श्री विद्यासागर जी जैसे अनुपम वीतराग व्यक्तित्व को गढ़नेवाला शिल्पी कितना अनुपम होगा यह विद्यासागर जी के व्यक्तित्व को देखकर सहज ही अनुमानगम्य हो जाता है। उस अनुपम व्यक्तित्व के धनी आचार्य ज्ञानसागर जी के पाँच गुण उल्लेखनीय हैं: ज्ञानपिपासा, स्वावलम्बन, महाकवित्व, शिष्यसंस्कार-कौशल एवं त्याग और नम्रता की चरमसीमा।

ज्ञानपिपासा

आचार्यश्री का गृहस्थावस्था का नाम श्री भूरामल था। अपने गाँव के विद्यालय में वे केवल प्रारम्भिक शिक्षा ही प्राप्त कर सके। आगे अध्ययन का साधन न होने से अपने बड़े भाई के पास 'गया' चले गये और व्यावसायिक कार्य सीखने लगे। किन्तु उनका ज्ञानपिपासु मन व्यवसाय में नहीं लगता था, पढ़ने के लिए बेचैन रहता था। एकबार उनका साक्षात्कार किसी समारोह में भाग लेने आये स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी के छात्रों से हुआ। उन्हें देखकर किशोर भूरामल की ज्ञानपिपासा उद्दीप्त हो गई और बड़े भाई की अनुमति लेकर अध्ययनार्थ बनारस चले गये। वहाँ उन्होंने जैन शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन किया और शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण कर घर लौटे।

स्वावलम्बन

वाराणसी में विद्यार्थी भूरामल को अपने अध्ययन का खर्च उठाने के लिए स्वयं ही अर्थोपर्जन करना पड़ता था। वे सायंकाल गंगा के घाटों पर गमछा बेचकर धनोपार्जन करते थे। इसमें उन्हें किसी संकोच का अनुभव नहीं होता था। किसी श्रीमान् से सहायता की याचना करने की बजाय स्वयं के श्रम द्वारा धनोपार्जन करना उन्हें अधिक पवित्र और स्वाभिमान के अनुकूल प्रतीत हुआ। यह आज के निर्धन विद्यार्थियों के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण है। लोकोत्तर पुरुष ही ऐसे पदचिह्न निर्मित करते हैं, जो अँधेरे में भटकते लोगों के लिए प्रकाशस्तम्भ बन जाते हैं।

महाकवित्व

अध्ययनकाल में विद्यार्थी भूरामल की दृष्टि इस तथ्य पर गई कि जैन वाङ्मय में महाकाव्यादि साहित्यिक ग्रन्थों की न्यूनता है। अतः उन्होंने संकल्प किया कि वे इस न्यूनता को दूर करेंगे। और विद्याध्ययन के बाद घर लौटकर उन्होंने ऐसा कर दिखाया। उनमें अद्भुत काव्य प्रतिभा थी। उन्होंने संस्कृत भाषा में जयोदय, वीरोदय और सुदर्शनोदय नाम के ऐसे उत्कृष्ट महाकाव्यों की रचना की, जिन्हें काव्यमर्मज्ञों ने भारवि, माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों की टक्कर का माना है तथा बृहत्त्रयी नाम से प्रसिद्ध किरातार्जुनीय, शिशुपालवध एवं नैषधीयचरित की श्रेणी में जयोदय को रखकर उन्हें बृहच्चतुष्टयी संज्ञा से मण्डित किया है। महाकवि भूरामल जी के महाकाव्य विविध वक्रताओं, प्रतीकों, बिम्बों, अलंकारों, मुहावरों, लोकोक्तियों, सूक्तियों आदि सभी काव्य गुणों से विभूषित हैं। उनके 'जयोदय' महाकाव्य की समीक्षा करते हुए संस्कृत के अन्तःराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान् डॉ. सत्यव्रत शास्त्री लिखते हैं-

"मुनि श्री ज्ञानसागर जी ने अपने जयोदय महाकाव्य में कथानक की प्रस्तुति इस ढंग से की है कि वह अत्यन्त रोचक एवं हृदयग्राही बन गया है। एक ही पात्र के अनेक पूर्वजन्मों एवञ्च तद्गत कार्यकलापों के वर्णन की दुरूहता को उन्होंने सरस काव्यशैली द्वारा दूर करने का सफल प्रयास किया है, जिसमें उन्हें पूर्ण सफलता मिली है। मुनिश्री का शब्दकोश अत्यन्त समृद्ध है। उस कोश में से कभी-कभी वे ऐसे शब्द भी निकाल लाते हैं, जो कदाचित् आज के पाठक के लिए सुपरिचित नहीं हैं। यथा तरस्=गुण, रोक=प्रभा, संहिताय=हितमार्ग, ऊषरटक=रेतीला, रसक=चर्मपात्र आदि। उनकी वाणी स्थान-स्थान पर अनुप्रास से सुसज्जित है। कहीं-कहीं तो पदशय्या इस प्रकार की है, कि लगता है एक साथ कई घंटियाँ बजने लगती हों-'अनुभवन्ति भवन्ति भवान्तकाः, नाथवंशिन इवेन्दुवंशिनः ये कुतोऽपि परपक्षशंसिनः।' अन्त्यानुप्रास तो मानों उनके लिए काव्यक्रीडा है। काव्य के लगभग हर श्लोक को उसने आलोकित किया है।" (जयोदय महाकाव्य का शैलीवैज्ञानिक अनुशीलन/प्राक्कथन, पृ.VI)

शिष्यसंस्कार-कौशल

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का शिष्यसंस्कारकौशल कितना अनूठा था यह उनके शिष्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के भव्य, लोकोत्तर व्यक्तित्व को ही देखने से पता चल जाता है। ऐसे आत्मानुशासित, सम्मोहक, निःस्पृह, ज्ञानगंभीर, प्रखरतपस्वी व्यक्तित्व का निर्माण करने वाले हाथ निश्चय ही बड़े सधे, मँजे रहे होंगे। शिष्य विद्याधर गुरु के पास ज्ञानपिपासा लेकर आता है और गुरु से ज्ञानदान के लिए प्रार्थना करता है, तब गुरु कहते हैं- "तुम्हारे जैसे कई ब्रह्मचारी मेरे पास आये हैं और सब पढ़कर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चले गये, लेकिन रुका कोई नहीं।'' गुरु के ये वचन शिष्य को इतना बदल देते हैं कि ब्रह्मचारी विद्याधर आजीवन वाहन का त्याग कर देता है।

इससे गुरु की आँखें विस्मय और हर्ष से चमक उठती हैं। वे स्नेहसिक्त हाथ शिष्य के मस्तक पर रख देते हैं और अत्यन्त वात्सल्यभाव से कहते हैं-'विद्याधर, बहुत देरे से आये। मैं तुम्हें पढ़ा-लिखाकर विद्याधर से विद्यानन्दी (तत्त्वार्थश्लोकवार्तिक के कर्त्ता) बना दूँगा।' इन वात्सल्यपूर्ण वचनों को सुनकर शिष्य विद्याधर आनन्द से गदगद हो जाता है।

ऐसा विवेकपूर्ण लालन-ताडन का कौशल, प्यार से अँगुली पकड़कर शिष्य को वांछित दिशा में ले जाने और उसके आचरण पर प्रहरी की आँख रखकर उसे स्खलनों से बचाते रहने का नैपुण्य आचार्य श्री ज्ञानसागर जी में था, जिसके द्वारा उन्होंने आचार्य विद्यासागर जैसे अद्वितीय व्यक्तित्व का निर्माण किया।

त्याग और नम्रता की चरमसीमा

अस्सी वर्ष की अवस्था में जब आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के जीवन का अन्तिम समय आया, तब उन्होंने अपना आचार्यपद अपने योग्यतम शिष्य मुनि श्री विद्यासागर जी को दे दिया और स्वयं अपने शिष्य के शिष्य बन गये तथा उनके चरणों में मस्तक रखकर सल्लेखनाव्रत प्रदान करने की याचना की। शिष्य विद्यासागर मुश्किल में पड़ गये। किन्तु गुरु ने गुरुदक्षिणा देने के रूप में यह पद स्वीकार करने की बाध्यता उत्पन्न कर दी। तब उन्हें विवश होकर गुरु का आदेश शिरोधार्य करना पड़ा। गुरुता का त्याग कर देना और अपने ही शिष्य को अपना गुरु बना कर लघुता स्वीकार कर लेना त्याग और नम्रता के उत्कर्ष की चरम सीमा है। यह एक ऐसी मिसाल है जो इतिहास में देखने को नहीं मिलती। आचार्य श्री ज्ञानसागर जी का एकमात्र यही गुण उन्हें लोकोत्तर बना देता है और भव्यात्माओं के मस्तक को उनके सामने श्रद्धा से अवनम्र कर देता है।

आचार्यश्री ज्ञानसागर जी का समाधिमरण ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या वि.सं. 2030, दि. 1 जून 1973 को हुआ था। तदनुसार ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या वि.सं. 2059, दि. 10 जून 2002 को उनका तीसवाँ समाधिदिवस है। यह हमें संसारबन्धन से मुक्त होने की प्रेरणा देता है।

रतनचन्द्र जैन

भोपाल में ग्रीष्मकालीन वाचना का निष्ठापन

श्री दि. जैन मंदिर, टिन शेड, टी.टी. नगर, भोपाल में परमपूज्य आचार्य श्री विरागसागर जी के सुशिष्य पूज्य मुनिश्री विशुद्धसागर जी, मुनि श्री विशल्यसागर जी, मुनि श्री विश्ववीर सागर जी एवं मुनिश्री विश्रान्तसागर जी के तत्त्वावधान में दिनांक 17.5.2002 को ग्रीष्मकालीन आध्यात्मिक एवं सैद्धान्तिक वाचना की स्थापना की गई थी, जिसकी निष्ठापना दिनांक 15.6.2002 को समारोहपूर्वक सम्पन्न हुई।

प्रतिदिन प्रात: 7 से 8 बजे तक मुनि श्री विश्रान्तसागर जी द्रव्संग्रह की वाचना एवं विवेचना करते थे। 8 से 8.30 तक मुनि श्री विशल्यसागर एवं मुनि श्री विश्ववीर सागर एक-एक दिन श्रावकधर्म पर प्रकाश डालते थे। 8.30 से 9.30 तक मुनि श्री विशुद्धसागर जी का बारसाणुवेक्खा पर प्रवचन होता था। अपराह्न 3.00 से 4.00 तक मुनि श्री विशुद्ध सागर जी परमात्मप्रकाश के माध्यम से अध्यात्म का सूक्ष्म, गहन विश्लेषण करते थे। तत्पश्चात् 4.00 से 5.00 तक प्रो. रतनचन्द्र जी जैन के द्वारा तत्त्वार्थवार्तिक के चतुर्थ अध्याय की वाचना की जाती थी।

पूज्य मुनि श्री विशुद्ध सागर जी द्वारा की जाने वाली आध्यात्मिक चर्चा इतनी रोचक और प्रभावक होती थी कि श्रोता पन्थ, पक्ष और जाति का भेद न करते हुए बड़ी संख्या में सुनने के लिए उपस्थित होते थे। मुनि श्री ने 'माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ' पर जोर देते हुए यह सन्देश दिया कि जो हमसे विपरीत विचारधारा रखता है उसे केवल वात्सल्यभाव से समझाने की ही कोशिश की जाय, उसकी निन्दा-गर्हा-आलोचना न की जाय, क्योंकि निन्दा-गर्हा-आलोचना से वह और कट्टर बनता है।

निष्ठापना के दूसरे दिन मुनिसंघ टिन शेड जैन मंदिर से विहार कर दि. जैन मन्दिर पंचशील नगर भोपाल पहुँच गया। संघ अभी वहीं विराजमान है और प्रतिदिन प्रात: 8.30 से बारसाणुपेक्खा पर प्रवचन होते हैं। अपराह्न 3.00 बजे से 4.00 तक परमात्मप्रकाश की वाचना की जाती है।

अजित पाटनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की जीवन यात्रा

निहालचन्द्र जैन, पूर्व प्राचार्य अजमेर (राज.)

प्राचीनकाल से ही भारत वसुन्धरा ने अनेक महापुरुषों एवं नर-पुंगवों को जन्म दिया है। इन नर-रत्नों ने भारत के सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं शौर्य के क्षेत्र में अनेकों कीर्तिमान स्थापित किये हैं। जैन धर्म भी भारतभूमि का एक प्राचीन धर्म हैं, जहाँ तीर्थंकर, श्रुतकेवली, केवली भगवान के साथ-साथ अनेकों आचार्यों, मुनियों एवं सन्तों ने इस धर्म का अनुसरण कर मानव समाज के लिए मुक्ति एवं आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है।

इस 19-20 शताब्दी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य परम-पूज्य, चारित्र चक्रवर्ती आचार्य 108 श्री शांतिसागर जी महाराज थे, जिनकी परम्परा में आचार्यश्री वीर सागरजी, आचार्य श्री शिव सागरजी इत्यादि तपस्वी साधुगण हुए। मुनि श्री ज्ञानसागरजी आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज से वि. सं. 2016 में खानियाँ (जयपुर) में मुनिदीक्षा लेकर अपने आत्मकल्याण के मार्ग पर आरूढ़ हो गये थे। आप शिवसागर आचार्य महाराज के प्रथम शिष्य थे।

मुनि श्री ज्ञानसागर जी का जन्म राणोली ग्राम (सीकर-राजस्थान) में दिगम्बर जैन छाबड़ा कुल में सेठ सुखदेवजी के पुत्र चतुर्भुज जी की धर्मपत्नी घृतावरी देवी की कोख से हुआ था। आपके बड़े भ्राता श्री छगनलालजी थे तथा दो छोटे भाई और थे तथा एक भाई का जन्म तो पिताश्री के देहान्त के बाद हुआ था । आप स्वयं भूरामल के नाम से विख्यात हुये। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के प्राथमिक विद्यालय में हुई। साधनों के अभाव में आप आगे विद्याध्ययन न कर अपने बड़े भाई जी के साथ नौकरी हेतु गयाजी (बिहार) आ गये। वहाँ 13-14 वर्ष की आयु में एक जैनी सेठ की दूकान पर आजीविका हेतु कार्य करते रहे, लेकिन आपका मन आगे पढ़ने के लिए छटपटा रहा था। संयोगवश स्याद्वाद महाविद्यालय, वाराणसी के छात्र किसी समारोह में भाग लेने हेतु गयाजी (बिहार) आये। उनके प्रभावपूर्ण कार्यक्रमों को देखकर युवा भूरामल के भाव भी विद्या प्राप्ति हेतु वाराणसी जाने के हुए। विद्याध्ययन के प्रति आपकी तीव्र भावना एवं दृढ़ता देखकर आपके बड़े भ्राता ने 15 वर्ष की आयु में आपको वाराणसी जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी।

श्री भूरामल जी बचपन से ही कठिन परिश्रमी, अध्यवसायी, स्वावलम्बी एवं निष्ठावान थे। वाराणसी में आपने पूर्ण निष्ठा के साथ विद्याध्ययन किया और संस्कृत एवं जैन सिद्धान्त का गहन अध्ययन कर शास्त्री परीक्षा पास की। जैन धर्म से संस्कारित श्री भूरामल जी न्याय, व्याकरण एवं प्राकृत ग्रन्थों को जैन सिद्धान्तानुसार पढ़ना चाहते थे, जिसकी उस समय वाराणसी में समुचित व्यवस्था नहीं थी। आपका मन क्षुब्ध हो उठा, परिणामतः आपने जैन साहित्य, न्याय और व्याकरण को पुनर्जीवित करने का भी दृढ़ संकल्प लिया। अड़िग विश्वास, निष्ठा एवं संकल्प के धनी श्री भूरामल जी ने कई जैन एवं जैनेतर विद्वानों से जैन वाङ्मय की शिक्षा प्राप्त की। वाराणसी में रहकर ही स्याद्वाद महाविद्यालय से "शास्त्री" की परीक्षा पास कर आप पं. भूरामल जी नाम से विख्यात हुए। वाराणसी में ही आपने जैनाचार्यों द्वारा लिखित न्याय, व्याकरण, साहित्य, सिद्धान्त एवं अध्यात्म विषयों के अनेक ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया।

बनारस से लौट कर आपने अपने ही ग्रामीण विद्यालय में अवैतनिक अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया, लेकिन साथ में निरन्तर साहित्य-साधना एवं साहित्य-लेखन के कार्य में भी अग्रसर होते गये। आपकी लेखनी से एक से एक सुन्दर काव्यकृतियाँ जन्म लेती रहीं। आपकी तरुणाई, विद्वत्ता और आजीविकोपार्जन की क्षमता देखकर आपके विवाह के लिए अनेकों प्रस्ताव आये, सगे सम्बन्धियों ने भी आग्रह किया, लेकिन आपने वाराणसी में अध्ययन करते हुए ही संकल्प ले लिया था कि आजीवन ब्रह्मचारी रहकर माँ सरस्वती और जिनवाणी की सेवा में, अध्ययन-अध्यापन तथा साहित्य-सृजन में ही अपने आपको समर्पित कर दूँगा। इस तरह जीवन के 50 वर्ष साहित्य साधना, लेखन, मनन एवं अध्ययन में व्यतीत कर पूर्ण पांडित्य प्राप्त कर लिया। इसी अवधि में आपने दयोदय, भद्रोदय, वीरोदय, सुदर्शनोदय आदि साहित्यिक रचनाएँ संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में प्रस्तुत कीं। वर्तमान शताब्दी में संस्कृत भाषा के महाकाव्यों की रचना की परम्परा को जीवित रखनेवाले मूर्धन्य विद्वानों में आपका नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। काशी के दिग्गज विद्वानों की प्रतिक्रिया थी "इस काल में भी कालिदास और माघकवि की टक्कर लेने वाले विद्वान हैं, यह जानकर प्रसन्नता होती है।" इस तरह पूर्ण उदासीनता के साथ, जिनवाणी माँ की अविरत सेवा में आपने गृहस्थाश्रम में ही जीवन के 50 वर्ष पूर्ण किये। जैन सिद्धान्त के हृदय को आत्मसात करने हेतु आपने सिद्धान्त ग्रन्थों श्री धवल, महाधवल, जयधवल, महाबन्ध आदि ग्रन्थों का विधिवत् स्वाध्याय किया। "ज्ञानं भारं क्रियां विना" क्रिया के बिना ज्ञान भारस्वरूप है, इस मंत्र को जीवन में उतारने हेतु आप त्यागमार्ग पर प्रवृत्त हुए।

सर्वप्रथम 52 वर्ष की आयु में सन् 1947 में आपने अजमेर नगर में ही आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज से सप्तम प्रतिमा के व्रत अंगीकार किये। 54 वर्ष की आयु में आप पूर्णरूपेण गृहत्याग कर आत्मकल्याण हेतु जैन सिद्धान्त के गहन अध्ययन में लग गये। सन् 1955 में 60 वर्ष की आयु में आप आचार्य श्री वीर-सागरजी महाराज से ही रेनवाल में क्षुल्लक दीक्षा लेकर ज्ञानभूषण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के नाम से विख्यात हुए। सन् 1959 में 62 वर्ष की आयु में आचार्य श्री शिवसागर जी महाराज से खानियाँ (जयपुर) में मुनि दीक्षा अंगीकार कर 108 मुनि श्री ज्ञानसागरजी के नाम से विभूषित हुए और आपको आचार्य श्री का प्रथम शिष्य होने का गौरव प्राप्त हुआ। संघ में आपने उपाध्याय पद के कार्य को पूर्ण विद्वत्ता एवं सजगता के साथ सम्पन्न किया। रूढ़िवाद से कोसों दूर मुनि ज्ञानसागर जी मुनिपद की सरलता और गंभीरता को धारण कर मन, वचन और काय से दिगम्बरत्व की साधना में लग गये। दिन-रात आपका समय आगमानुकूल मुनिचर्या की साधना, ध्यान, अध्ययन-अध्यापन एवं लेखन में व्यतीत होता रहा, फिर राजस्थान प्रान्त में ही विहार करने निकल गये। उस समय आपके साथ मात्र दो-चार त्यागी-व्रती थे, विशेष रूप से ऐलक श्री सन्मतिसागर जी, क्षुल्लक श्री संभवसागर जी व सुखसागर जी तथा एक-दो ब्रह्मचारी थे। मुनि श्री उच्चकोटि के शास्त्र-ज्ञाता, विद्वान एवं तात्त्विक वक्ता थे। पंथवाद से दूर रहते हुए आपने सदा जैन सिद्धान्तों को जीवन में उतारने की प्रेरणा दी और एक सद्गृहस्थ का जीवन जीने का आह्वान किया।

विहार करते हुए आप मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर तथा ब्यावर भी गये। ब्यावर में पंडित हीरालाल जी शास्त्री ने मुनि श्री को उनके द्वारा लिखित ग्रन्थों एवं पुस्तकों को प्रकाशित कराने की बात कही, तब आपने कहा "जैन वाङ्मय की रचना करने का काम मेरा है, प्रकाशन आदि का कार्य आप लोगों का है"।

जब सन् 1967 में आपका चातुर्मास मदनगंज-किशनगढ़ में हो रहा था, तब जयपुर नगर के चूलगिरि क्षेत्र पर आचार्य देश भूषण जी महाराज का वर्षायोग चल रहा था। चूलगिरि का निर्माण-कार्य भी आपकी देखरेख एवं संरक्षण में चल रहा था। उसी समय सदलगा ग्रामनिवासी, एक कन्नड़भाषी नवयुवक आपके पास ज्ञानार्जन हेतु आया। आचार्य देशभूषण जी की आँखों ने शायद उस नवयुवक की भावना को पढ़ लिया था, सो उन्होंने उस नवयुवक विद्याधर को आशीर्वाद प्रदान कर ज्ञानार्जन हेतु मुनिवर ज्ञानसागर जी के पास भेज दिया। जब मुनिश्री ने नौजवान विद्याधर में ज्ञानार्जन की एक तीव्र कसक एवं ललक देखी तो मुनिश्री ने पूछ ही लिया कि अगर विद्यार्जन के पश्चात् छोड़कर चले जाओगे तो मुनि का परिश्रम व्यर्थ जायेगा। नौजवान विद्याधर ने तुरन्त ही दृढ़ता के साथ आजीवन सवारी का त्याग कर दिया। इस त्यागभावना से मुनि ज्ञानसागर जी अत्यधिक प्रभावित हुए और टक-टकी लगाकर उस नौजवान की मनोहारी, गौरवर्ण तथा मधुर मुस्कान के पीछे छिपे हुए दृढ़-संकल्प को देखते ही रह गये।

शिक्षण प्रारम्भ हुआ। योग्य गुरु के योग्य शिष्य विद्याधर ने ज्ञानार्जन में कोई कसर नहीं छोड़ी। इसी बीच उन्होंने अखंड ब्रह्मचर्य व्रत को भी धारण कर लिया। ब्रह्मचारी विद्याधर की साधना, प्रतिभा, तत्परता तथा ज्ञान के क्षयोपशम को देखकर गुरु ज्ञानसागर जी इतने प्रभावित हुए कि उनकी कड़ी परीक्षा लेने के बाद, उन्हें मुनिपद ग्रहण करने की स्वीकृति दे दी। इस कार्य को सम्पन्न करने का सौभाग्य मिला अजमेर नगर को और सम्पूर्ण जैन समाज को। 30 जून 1968 तदनुसार आषाढ़ शुक्लपंचमी को ब्रह्मचारी विद्याधर को विशाल जन समुदाय के समक्ष जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान की गई और विद्याधर, मुनि विद्यासागर के नाम से सुशोभित हुए। उस वर्ष का चातुर्मास अजमेर में ही सम्पन्न हुआ।

तत्पश्चात् मुनि श्री ज्ञानसागर जी का संघ विहार करता हुआ नसीराबाद पहुँचा। यहाँ आपने 7 फरवरी 1969 तदनुसार मगसरबदी दूज को श्री लक्ष्मीनारायण जी को मुनिदीक्षा प्रदान कर मुनि 108 श्री विवेकासागर नाम दिया। इसी पुनीत अवसर पर समस्त उपस्थित जैन समाज द्वारा आपको आचार्य पद से सुशोभित किया गया।

आचार्य ज्ञानसागर जी की हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके शिष्य उनके सान्निध्य में अधिक से अधिक ज्ञार्नाजन कर लें। आचार्यश्री अपने ज्ञान के अथाह सागर को समाहित कर देना चाहते थे विद्या के सागर में और दोनों ही गुरु-शिष्य उतावले थे एक दूसरे में समाहित होकर ज्ञानामृत का निरन्तर पान करने और कराने में। आचार्य ज्ञानसागर जी सच्चे अर्थों में एक विद्वान जौहरी और पारखी थे तथा बहुत दूर दृष्टिवाले थे। उनकी काया निरन्तर क्षीण होती जा रही थी। गुरु और शिष्य की जैन सिद्धान्त एवं वाङ्मय की आराधना, पठन-पाठन एवं तत्त्वचर्चा-परिचर्चा निरन्तर अबाधगति से चल रही थी।

तीन वर्ष पश्चात् 1972 में आपके संघ का चातुर्मास पुनः नसीराबाद में हुआ। अपने आचार्य गुरु की गहन अस्वस्थता में उनके परम सुयोग्य शिष्य मुनि श्री विद्यासागर जी ने पूर्ण निष्ठा और निःस्पृहभाव से इतनी सेवा की कि शायद कोई लखपती बाप का बेटा भी इतनी निष्ठा और तत्परता के साथ अपने पिता श्री की सेवा कर पाता। कानों सुनी बात तो एक बार झूठी हो सकती है, लेकिन आँखों देखी बात को तो शत-प्रतिशत सत्य मान कर ऐसी उत्कृष्ट गुरुभक्ति के प्रति नतमस्तक होना ही पड़ता है।

चातुर्मास समाप्ति की ओर था। आचार्य श्री ज्ञानसागर जी शारीरिक रूप से काफी अस्वस्थ एवं क्षीण हो चुके थे। साइटिका का दर्द कम होने का नाम ही नहीं ले रहा था। दर्द की भयंकर पीड़ा के कारण आचार्यश्री चलने-फिरने में असमर्थ होते जा रहे थे। 16-17 मई 1972 की बात है- आचार्य श्री ने अपने योग्यतम शिष्य मुनि विद्यासागर से कहा "विद्यासागर ! मेरा अन्त समीप है। मेरी समाधि कैसे सधेगी ?

इसी बीच एक महत्त्वपूर्ण घटना नसीराबाद प्रवास के समय घटित हो चुकी थी। आचार्यश्री के देह-त्याग से करीब एक माह पूर्व ही दक्षिण प्रान्तीय मुनि श्री पार्श्वसागर जी आचार्यश्री की निर्विकल्प समाधि में सहायक होने हेतु नसीराबाद पधार चुके थे। वे कई दिनों से आचार्य श्री ज्ञानसागरजी की सेवा-सुश्रूषा एवं वैय्यावृत्य कर अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहते थे। नियति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को कुछ और ही मंजूर था। 15 मई 1972 को पार्श्वसागर महाराज को शारीरिक व्याधि उत्पन्न हुई और 16 मई को प्रातः काल करीब 7 बजकर 45 मिनिट पर अरहन्त, सिद्ध का स्मरण करते हुए वे इस नश्वर देह का त्याग कर स्वर्गारूढ़ हो गये। अतः अब यह प्रश्न आचार्य ज्ञानसागर जी के सामने उपस्थित हुआ कि समाधि हेतु आचार्य पद का परित्याग तथा किसी अन्य आचार्य की सेवा में जाने का आगम में विधान है। आचार्य श्री के लिए इस भंयकर शारीरिक उत्पीडन की स्थिति में किसी अन्य आचार्य के पास जाकर समाधि लेना भी संभव नहीं था। आचार्यश्री ने अन्ततोगत्वा अपने शिष्य मुनि श्री विद्यासागर जी से कहा "मेरा शरीर आयु कर्म के उदय से रत्नत्रय-आराधना में शनैः शनैः कृश हो रहा है। अतः मैं यह उचित समझता हूँ कि शेष जीवनकाल में आचार्य पद का परित्याग कर इस पद पर अपने प्रथम एवं योग्यतम शिष्य को पदासीन कर दूँ। मेरा विश्वास है कि आप श्री जिनशासन संवर्धन एवं श्रमण संस्कृति का संरक्षण करते हुए इस पद की गरिमा को बनाये रखोगे तथा संघ का कुशलतापूर्वक संचालन कर समस्त समाज को सही दिशा प्रदान करोगे।" जब मुनि श्री विद्यासागरजी ने इस महान भार को उठाने में ज्ञान, अनुभव और उम्र से अपनी लघुता प्रकट की तो आचार्य ज्ञानसागरजी ने कहा- "तुम मेरी समाधि साध दो, आचार्य पद स्वीकार कर लो। फिर भी तुम्हें संकोच है तो गुरु दक्षिणास्वरूप ही मेरे इस गुरुतर भार को धारण कर मेरी निर्विकल्प समाधि करा दो, अन्य उपाय मेरे सामने नहीं है।"

मुनि श्री विद्यासागर जी काफी विचलित हो गये, काफी मंथन किया, विचार-विमर्श किया और अन्त में निर्णय लिया कि गुरु-दक्षिणा तो गुरु को हर हालत में देनी ही होगी और इस तरह उन्होंने अपनी मौन स्वीकृति गुरु-चरणों से समर्पित कर दी।

अपनी विशेष आभा के साथ 22 नवम्बर 1972 तदनुसार मगसर बदी दूज का सूर्योदय हुआ। आज जिनशासन के अनुयायिओं को साक्षात् एक अनुपम एवं अद्भुत दृश्य देखने को मिला। कल तक जो श्री ज्ञानसागरजी महाराज संघ के गुरु थे, आचार्य थे, सर्वोपरि थे, आज वे ही साधु एवं मानव धर्म की पराकाष्ठा का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करने जा रहे थे, यह एक विस्मयकारी एवं रोमांचक दृश्य था, मुनि की संज्वलन कषाय की मन्दता का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण था। आगमानुसार आचार्य श्री ज्ञानसागरजी ने आचार्य पदत्याग की घोषणा की तथा समाज से अपने सर्वोत्तम योग्य शिष्य मुनि श्री विद्यासागरजी को अपना गुरुतर भार एवं आचार्य पद देने की स्वीकृति माँगकर, उन्हें आचार्य पद से विभूषित किया। जिस बडे पट्टे पर आज तक आचार्यश्री ज्ञानसागर जी आसीन होते थे, उससे वे नीचे उतर आये और मुनि श्री विद्यासागरजी को उस आसन पर पदासीन किया। जन-समुदाय की आँखें सुखानन्द के आँसुओं से तरल हो गईं। जयघोष से आकाश और मंदिर का प्रागंण गूँज उठा। आचार्य श्री विद्यासागर जी ने अपने गुरु के आदेश का पालन करते हुए पूज्य गुरुवर की निर्विकल्प समाधि के लिए आगमानुसार व्यवस्था की। गुरु ज्ञानसागरजी महाराज भी परम शान्तभाव से अपने शरीर के प्रति निर्ममत्व होकर रसत्याग की ओर अग्रसर होते गए।

आचार्य श्री विद्यासागरजी ने अपने गुरु की सल्लेखनापूर्वक समाधि कराने में कोई कसर नहीं छोडी। रात-दिन जागकर एवं समयानुकूल सम्बोधन करते हुए आचार्यश्री ने मुनिवर की शांतिपूर्वक समाधि कराई। अन्त में समस्त आहार एवं जल के त्यागोपरान्त मिती ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या वि. स. 2030 तदनुसार शुक्रवार दिनाँक 1 जून 1973 को दिन में 10 बजकर 50 मिनिट पर गुरु ज्ञानसागर जी इस नश्वर शरीर का त्याग कर आत्मलीन हो गये और दे गये समस्त समाज को एक ऐसा सन्देश कि अगर सुख, शांति और निर्विकल्प समाधि चाहते हो तो कषायों का शमन कर रत्नत्रय मार्ग पर आरुढ़ हो जाओ, तभी कल्याण संभव है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आचार्य ज्ञानसागरजी का विशाल कृतित्व और व्यक्तित्व इस भारतभूमि के लिए सरस्वती के वरदपुत्र की उपलब्धि कराता है। अनेकानेक ज्ञान पिपासुओं ने इनके महाकाव्यों पर शोध कर डाक्टर की उपाधि प्राप्त कर अपने आपको गौरवान्वित किया है। आचार्यश्री के साहित्य की सुरभि वर्तमान में सारे भारत में फैल कर विद्वानों को इस तरह आकर्षित करने लगी है कि समस्त भारतवर्षीय जैन-अजैन विद्वानों का ध्यान उनके महाकाव्यों की ओर गया है।

'जयोदय' महाकाव्य (पूर्वार्ध) से साभार

मुलायम मखमल लगाना ठीक रहेगा

ऐसी ही एक घटना और हुई, जब किसी श्रावक ने आचार्य महाराज को हाथ का सहारा लेकर विश्राम करते देखा, तो यह सोचकर कि इस तरह लेटने से वृद्धावस्था में महाराज को कष्ट होता होगा, एक लकड़ी का फलक बनवाकर सिरहाने रख दिया। दूसरे दिन सुबह जैसे ही वह श्रावक आए, महाराज जी ने मुस्कराकर कहा कि "देखो, यह जो लकड़ी का टुकड़ा आपने रखा है वह जरा कठोर है, इस पर मुलायम मखमल लगाना ठीक रहेगा।" बात सीधे-सादे ढंग से कही गई थी, पर मार्मिक थी और शिथिलता का पोषण करने वालों के प्रति प्रच्छन्न व्यंग्य के रूप में दिशाबोध देने वाली थी।

'आत्मान्वेषी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य ज्ञानसागर जी की साहित्य-साधना

मुनि श्री क्षमासागर जी

मन, वाणी और कर्म सभी की पवित्रता के लिए अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह जैसे उदात्त मानवीय जीवन मूल्यों को अपने जीवन में पुष्पित, पल्लवित और फलित करके आध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूनेवाले आचार्य श्री ज्ञानसागरजी मानवतावादी, संवेदनशील साहित्यकारों की शृंखला में अत्यन्त आदरणीय हैं।

मानव-समाज का कल्याण करने में महाकवि ज्ञानसागर की काव्यसम्पत्ति महाकवि अश्वघोष की काव्यसम्पत्ति से भी अधिक मूल्यवन्त है। क्योंकि महाकवि ज्ञानसागर ने भारतीय मनीषा प्रसूत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह नामक पाँच सार्वभौम महाव्रतों के परिपालन की सत्प्रेरणा देने की इच्छा से एक **चम्पू काव्य** और **महाकाव्यों** की सरस-सर्जना करके मानव समाज को संयमपूर्वक अपना जीवन बिताने का सर्वांगीण संदेश दिया है।

उनके ''दयोदय चम्पू'' के नायक का जीवन पाठकों के मनः पटल पर अहिंसा की दिव्य छवि बनाता है। 'समुद्रदत्त चारित्र' का नायक सत्य और अस्तेय की समुचित शिक्षा देता है। 'वीरोदय' के नायक श्री महावीर स्वामी ब्रह्मचर्य के प्रति आस्था जगाते हैं। 'जयोदय' का नायक अपरिग्रह के महत्त्व को अभिव्यक्त करता है और 'सुदर्शनोदय' के नायक के जीवन में आने वाले घात-प्रतिघात इन उपर्युक्त जीवनोपयोगी सभी महाव्रतों (संयमो) के पालन की शिक्षा के साथ ही साथ अपने व्यक्तित्व की पवित्रता की धैर्यपूर्वक रक्षा करते रहने का प्रभविष्णु संदेश देते हैं। महाकवि ज्ञानसागर के ये काव्य समवेत रूप से मानव समाज का समग्र कल्याण करने में अभी तक अनुपम ही हैं। इसके अलावा साहित्यिक दृष्टि से भी ये काव्य कालिदास, भारवि, माघ तथा श्री हर्ष के काव्यों से प्रतिस्पर्धा करते हुए प्रतीत होते हैं। कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, भावपक्ष, कलापक्ष, वर्णन-विधान, परिवेष आदि की दृष्टि से भी काव्य अत्यन्त सजीव और सहृदय आल्हादकारी हैं। इनसे संस्कृत साहित्य की अभूतपूर्व श्रीवृद्धि हुई है। यदि समालोचक धर्मनिरपेक्ष होकर कवि की रचनाओं को पढ़ें, तो वे पाएँगे कि ज्ञानसागर की रचनाएँ उच्च कोटि की हैं।

महाकवि ज्ञानसागर के काव्यों में अन्त्यानुप्रास शैली एक ऐसी अभिनव वस्तु है, जिससे कवि की मौलिकता में कोई संदेह नहीं रह जाता। यह कवि द्वारा साहित्य समाज को अनूठी देन है। इस शैली के माध्यम से कवि विरचित काव्यों में एक रमणीय प्रवाह दृष्टिगोचर होता है और दार्शनिक सिद्धान्तजन्य दक्षता भी नहीं चुभती है। कवि की यह शैली भी उनका संस्कृत साहित्य समाज में एक विशिष्ट स्थान निर्धारित करने में समर्थ है। वास्तव में संस्कृत भाषा में रचित अपने महाकाव्यों में तुलसीदासकृत रामचरितमानस की चौपाई शैली के समान शैली अपनाना अपने आप में ही एक संस्तुत्य कार्य है।

संस्कृत काव्यसम्पदा

जयोदय महाकाव्य

इस काव्य में शृंगाररसरूपिणी यमुना और वीर रस रूपिणी सरस्वती का शान्तरसरूपिणी गंगा के साथ अद्‌भुत संगम किया गया है। 'वृहत्त्रयी' की परम्परा में प्रौढ़ संस्कृत भाषा में इस काव्य की रचना हुई। इस काव्य में जयकुमार का परिणय, स्वयंवर में राजाओं के एकत्र होने, दासी द्वारा सुलोचना के समक्ष राजाओं का परिचय देने आदि का वर्णन इसे निःसंदेह 'नैषधीयचरित' के समकक्ष कर देता है। अनवद्यमति मंत्री का अर्ककीर्ति को समझाना अर्थ गौरव की झाँकी प्रस्तुत करता है। पर्वतवर्णन, वनविहारवर्णन, संध्यावर्णन और प्रभातवर्णन इसे माघ के ''शिशुपाल वध'' की तुलना में ले जाते हुए लगते हैं।

काव्य को पढ़कर लगता है कि साहित्य के माध्यम से दर्शन प्रस्तुत करने की कला में कवि सिद्धहस्त है। इस काव्य का उद्देश्य राजा जयकुमार और सुलोचना की प्रणय कथा के माध्यम से अपरिग्रह व्रत के माहात्म्य का वर्णन करने का रहा है। साथ ही धर्मसंगत, अर्थ, काम और मोक्ष पुरुषार्थ की सिद्धि भी इसी काव्य में की गई है। इस तरह जयोदय काव्यशास्त्रीय, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और दार्शनिक दृष्टियों से कालिदास एवं कालिदासोत्तर काव्यों के मध्य में पूर्णतः योग्य है। अट्ठाइस सर्गों वाले इस महाकाव्य को सन् 1950 में ब्रह्मचारी सूरजमल, जयपुर ने प्रकाशित कराया।

वीरोदय महाकाव्य

यह भगवान महावीर के त्याग एवं तपस्यापूर्ण जीवन पर आधारित बाईस सर्गों वाला महाकाव्य है। यह काव्य एक ओर तो शैली की दृष्टि से कालिदास की श्रेणी में आ जाता है और दूसरी ओर दर्शनपरक होने के कारण बौद्ध दार्शनिक महाकवि अश्वघोष के समकक्ष आता है।

काव्यशास्त्रीय दृष्टि से इस काव्य को देखें तो यह उत्कृष्ट कोटि का महाकाव्य है। इसकी घटनाओं की जीवन्तता इसे इतिहास ग्रन्थ एवं पुराणग्रन्थ की श्रेणी में ले जाती है। इसमें धर्म के स्वरूप की प्रस्तुति का कौशल देखकर लगता है मानो यह कोई धर्मग्रन्थ है।

यह काव्य सहृदयग्राह्य है। इसमें ब्रह्मचर्य की गरिमा और अहिंसा तथा अपरिग्रह का उपदेश अनुकरणीय है। पुनर्जन्म और कर्मसिद्धान्त भी प्राणी मात्र को अच्छे-अच्छे कार्य करने की प्रेरणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देते हैं। कवि द्वारा की गई दर्शन के सिद्धान्तों की प्रस्तुति दार्शनिकों और कवियों दोनों की रुचियों को संतुष्ट करने में सक्षम है।

इस काव्य का प्रकाशन 1968 में प्रकाशचन्द्र जैन, ब्यावर द्वारा कराया गया।

सुदर्शनोदय

यह नौसर्गों का एक छोटा-सा महाकाव्य है। इस काव्य के द्वारा कवि ने पंच नमस्कार मंत्र के महात्म्य को अवगत कराने का प्रयास किया है। साथ ही पातिव्रत्य, एकपत्नीव्रत, सदाचार आदि मानवीय जीवन मूल्यों की शिक्षा दी है। कपिला ब्राह्मणी की कामुकता, अभयमती का घात-प्रतिघात, देवदत्ता वेश्या की चेष्टाएँ और काव्य के नायक सुदर्शन की इन सब पर विजय काव्य के मार्मिक स्थल हैं। ये सभी स्थल पाठक को सच्चरित्र की शिक्षा देते हैं।

इस काव्य की सबसे बड़ी विशेषता है इसके गीत। साहित्य, संगीत एवं दर्शन का सम्मिश्रण काव्य को उत्कृष्ट बनाने में सहायक हुआ है। अन्तर्द्वन्द्व, प्रसन्नता, भक्ति, प्रेम इत्यादि मनोभावों को प्रकट करने में सहायक विभिन्न राग-रागनियों की शैलियों में बद्ध इन गीतों का प्रयोग कवि का अद्‌भुत प्रयास है।

कथा के माध्यम से प्रस्तुत इस ग्रंथ की शिक्षाएँ कोरा उपदेश न रहकर पाठक के हृदय पर छा जाने की क्षमता रखती हैं। ऐसी विशेषताएँ अन्य काव्यों में प्रायः दुर्लभ होती हैं। इस महाकाव्य का प्रकाशन 1966 में प्रकाशचंद्र जैन, ब्यावर द्वारा कराया गया।

भद्रोदय

इस काव्य में नौ सर्ग हैं। इसका अपरनाम 'समुद्रदत्त चरित' है। इसमें काव्य-नायक भद्रमित्र के माध्यम से अस्तेय महाव्रत की शिक्षा दी गई है और चोरी एवं असत्य भाषण के दुष्प्रभाव से बचने के लिए पाठकों को सावधान किया गया है।

इस काव्य को रचने का उद्देश्य किसी रोचक घटना विशेष को प्रस्तुत करना नहीं है। कथा तो काव्य के उद्देश्य अस्तेय की शिक्षा की सहायिका बन कर आयी है। पूरा काव्य पढ़ने पर एक ही निष्कर्ष निकलता है ''सत्यमेव जयते, नानृतम्''।

यह एक ऐसा काव्य है, जिसमें महाकाव्य और चरित काव्य की विशेषताएँ साथ-साथ दृष्टिगोचर होती हैं। यह काव्य आबाल वृद्ध सभी के लिए हितोपदेशात्मक है। इसका प्रकाशन दिगम्बर जैसवाल जैन समाज, अजमेर द्वारा 1969 में हुआ है।

दयोदय चम्पू

अन्य प्रचलित चम्पू काव्यों की अपेक्षा यह काव्य सरल और लघुकाय है। यही इस काव्य की नवीनता है। इस काव्य के माध्यम से कवि ने अहिंसाव्रत की शिक्षा देनी चाही है। समाज में अहिंसा व्रत का पालन सब करें, इसीलिये इस चम्पू काव्य में सामान्य धीवर के द्वारा जिसकी आजीविका ही हिंसा से चलती है, अहिंसा व्रत का पालन करवाया गया है और इस व्रत के प्रभाव से अगले जन्म में वह किस प्रकार, कई बार मृत्यु से बचा यह दर्शाया गया है।

काव्य में गद्य-पद्य का सुन्दर संतुलन है। इस काव्य का समृद्ध कलापक्ष अपने भावपक्ष को अच्छी तरह अभिव्यक्त करता है। इसका प्रकाशन 1966 में प्रकाशचंद्र जैन, ब्यावर द्वारा कराया गया है।

मुनि मनोरंजनाशीति

यह एक मुक्तक काव्य है, जिसमें अस्सी पद्य हैं। इसमें दिगम्बर मुनि एवं आर्यिका की चर्या और विशेषताओं का वर्णन हैं। पूरा काव्य उपदेशात्मक है। विषय के अनुसार इसकी भाषा प्रसाद गुण सम्पन्न है। पद्यों का अर्थ आसानी से हृदयंगम हो जाता है। इसका प्रकाशन विद्यासागर साहित्य संस्थान, पनागर, जबलपुर से 1990 में हुआ है।

ऋषि कैसा होता है ?

यह छोटी-सी अप्रकाशित कृति है। इसमें चालीस पद्य हैं। इसमें कवि ने ऋषि के स्वरूप एवं चरम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति के मार्ग का प्ररूपण किया है।

सम्यक्त्वसार शतक

यह एक उच्च श्रेणी का आध्यात्मिक काव्य है। समीचीन दृष्टि ही मुक्ति का प्रथम सोपान है, यह बात कवि ने बड़ी सरलता से पूरे काव्यमाधुर्य के साथ इस ग्रंथ में प्रस्तुत की है। दृष्टि की निर्मलता ज्ञान और आचरण की पवित्रता, यही तीनों मिलकर प्राणी मात्र के लिए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इसे ही जैन दर्शन में रत्नत्रय या मोक्षमार्ग कहा गया है। इस समीचीन दृष्टि के अभाव में ही संसार का प्रत्येक जीव बाह्य इन्द्रिय विषयों में सुख मानकर निरन्तर दुःख उठा रहा है। कवि ने जैन दर्शन की गहराइयों को अपनी सरल भाषा द्वारा सर्वसाधारण के लिए बोधगम्य बनाने का प्रयास इस काव्य के माध्यम से किया है। मोक्षमार्ग के जिज्ञासुओं के लिये यह अत्यंत उपयोगी है। इसका प्रकाशन श्री दिगम्बर जैन समाज, हिसार से 1956 में पहली बार हुआ।

प्रवचन सार (अनुवाद कृति)

प्रस्तुत ग्रन्थ मौलिक रूप से आचार्य श्री कुंदकुंद स्वामी द्वारा प्रणीत है। इसकी भाषा प्राकृत है। इसमें तीन अधिकार ज्ञानाधिकार, ज्ञेयाधिकार और चारित्राधिकार हैं। आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने प्राकृत भाषा में रचित इस ग्रंथ की समस्त गाथाओं का संस्कृत भाषा के अनुष्टुप श्लोकों में छायानुवाद किया है। साथ ही उनका हिन्दी पद्यानुवाद एवं सारांश भी लिख दिया है। इस तरह यह ग्रंथ कविवर की मात्र हिन्दी रचना न रहकर संस्कृत एवं हिन्दी मिश्रित रचना हो गई है। ''गद्य कवीनां निकषं वदन्ति'' इस रूप में इस ग्रंथ का गद्य आदर्श, सरल और सरस है।

इस ग्रंथ के द्वारा जैन दर्शन के प्रमुख विषयों द्रव्य, गुण, पर्याय, अशुभ, शुभ, शुद्धोपयोग, उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य रूप सत् का स्वरूप एवं सच्चे साधु के कर्त्तव्य आदि को आसानी से समझाया जा सका है। यह ग्रंथ श्री महावीर सांगाका पाटनी,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किशनगढ़ रेनवाल ने सन् 1972 में प्रकाशित करवाया है।

हिन्दी काव्य सम्पदा

ऋषभावतार

महापुराण में वर्णित आदितीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के कथानक के आधार पर लिखा गया यह हिन्दी काव्य है। इस काव्य में सत्रह अध्याय हैं। काव्य की कुल पदसंख्या आठ सौ ग्यारह है। काव्य में शृंगार, शांत, वीर, वात्सल्य आदि रसों का यथास्थान सम्यक् प्रयोग हुआ है। इस काव्य में कवि ने सुकुमार शैली का प्रयोग किया है। समाप्ति भक्तिभाव की अभिव्यंजना के साथ हुई है।

कवि ने इस काव्य के माध्यम से जैन धर्म और दर्शन को भली-भाँति पाठकों तक पहुँचाया है। इस काव्य में आचार्य सम्मत महाकाव्य के सभी अधिकांश लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। अत: हमें इस काव्य को महाकाव्य की संज्ञा देने में संकोच नहीं करना चाहिए। इस काव्य का प्रकाशन श्री दिगम्बर जैन समाज, मदनगंज ने 1967 में कराया।

भाग्योदय

इस काव्य में धन्यकुमार का जीवन-वृत्तान्त बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। तेरह शीर्षकों वाले इस काव्य में प्रयुक्त समस्त पद्यों की संख्या आठ सौ अट्ठावन हैं। इस काव्य से कवि ने मानव को कर्मठता, सत्यवादिता, सहिष्णुता, त्यागप्रियता और परोपकारपरायणता की शिक्षा देने के प्रयास में अद्भुत सफलता पायी है। ऋषभावतार के समान ही यह काव्य भी महाकाव्य की संज्ञा पाने के योग्य है। यह काव्यग्रंथ श्री जैन समाज, हाँसी द्वारा 1957 में प्रकाशित हुआ है।

गुण सुंदर वृत्तान्त

यह रूपक काव्य है। इसमें राजा श्रेणिक के समय में युवावस्था में दीक्षित एक श्रेष्ठिपुत्र का मार्मिक वर्णन किया गया है।

कर्त्तव्य पथ प्रदर्शन

इस ग्रंथ में बयासी शीर्षकों के अन्तर्गत मानव के दैनिक कर्त्तव्यों की शिक्षा दी गई है। शिक्षा को रोचक बनाने के लिए अनेक कथाएँ शामिल की गई हैं। यदि इस पुस्तक में बताये गए सामान्य नियमों को व्यक्ति आत्मसात् कर ले, तो वह सच्चा मानव बन सकता है। इस पुस्तक का प्रकाशन सबसे पहले दिगम्बर जैन पंचायत, किशनगढ़ द्वारा 1959 में हुआ।

सचित्त विवेचन

प्रस्तुत पुस्तक में सचित्त यानी जीवाणुसहित और अचित्त यानी जीवाणुरहित पदार्थों का अन्तर समझाया गया है। दैनिक उपयोग में आने वाली खाद्य सामग्री-वनस्पति, जल आदि को अचित्त (बैक्टीरिया रहित) बनाने का उद्देश्य यथासम्भव हिंसा से बचना और इन्द्रियों पर अनुशासन बनाये रखना है।

ग्रंथ की भाषा सरल और सुबोध है। सामान्य ज्ञान रखने वाला व्यक्ति भी इस पुस्तक को पढ़कर लाभ ले सकता है। यह पुस्तक श्री जैन समाज, हाँसी द्वारा 1949 में पहली बार प्रकाशित हुई।

मानव धर्म

यह आचार्य समन्तभद्र स्वामी के रत्नकरण्डक श्रावकाचार के संस्कृत श्लोकों पर लिखी गई छोटी-छोटी टिप्पणियों का संकलन हैं। विषय को रोचक बनाने वाली छोटी-छोटी बोध-कथाएँ भी इसमें शामिल हैं। एक सामान्य गृहस्थ के लिये सच्ची जीवन दृष्टि, सच्चा ज्ञान और सच्चे आचरण की शिक्षा देने वाला यह एक समीचीन धर्म शास्त्र है। इसका प्रकाशन पहली बार श्री दिगम्बर जैन पंचायत, ललितपुर (उत्तरप्रदेश) के द्वारा 1988 में हुआ।

स्वामी कुंदकुंद और सनातन जैन धर्म

इस छोटी सी पुस्तक के माध्यम से कवि ने महान दिगम्बर जैन आचार्य कुंद-कुंद स्वामी का जीवन-परिचय प्रस्तुत किया है। साथ ही श्वेताम्बर, दिगम्बर मत की उत्पत्ति, उसकी विशेषताएँ, वस्त्राधारी को मुक्ति संभव नहीं, केवलज्ञान का वैशिष्ट्य आदि विषयों का अच्छा विवेचन किया है। इसका पहली बार प्रकाशन खजानसिंह विमलप्रसाद जैन, मुजफ्फरनगर ने 1942 में किया है।

पवित्र मानव जीवन

प्रस्तुत पुस्तक की रचना सरल हिन्दी भाषा के पद्यों में की गई । पूरी पुस्तक में एक सौ तिरानवे पद्य हैं। इसमें कवि ने जीवन को सफल बनाने वाले कर्त्तव्यों का निरूपण किया है। समाज सुधार, परोपकार, कृषि और पशुपालन, भोजन का नियम, स्त्री का दायित्व, बालकों के प्रति अभिभावकों का दायित्व आदि विषयों पर अच्छी सामग्री इसमें हैं। इस पुस्तक को दिगम्बर जैन महिला समाज, पंजाब ने पहली बार 1965 में प्रकाशित कराया।

सरल जैन -विवाह विधि

इस पुस्तक के माध्यम से कवि ने जैनविवाहपद्धति का दिग्दर्शन कराने का प्रयास किया है। मंत्रोच्चारण संस्कृत भाषा में हैं। उनका अनुवाद हिन्दी में है। सारी विधि विभिन्न छन्दों में पद्यात्मक रूप से लिखी गई है। इसका प्रकाशन दिगम्बर जैन समाज, हिसार ने पहली बार 1947 में कराया।

तत्त्वार्थ दीपिका

यह जैन धर्म के पवित्र ग्रंथ तत्त्वार्थसूत्र/मोक्षशास्त्र को सरल भाषा में प्ररूपित करने वाली पुस्तिका है। गहन, गम्भीर विषय को सरल बनाने के लिए रोचक उद्धरण शामिल किए गए हैं। वैसे भी मोक्षमार्ग और मोक्ष का निरूपण करने वाला आचार्य उमास्वामी का यह ग्रन्थ अपने आप में अनूठा है। इसका प्रकाशन दिगम्बर जैन समाज, हिसार ने पहली बार 1958 में कराया।

विवेकोदय

यह आचार्य कुंदकुंद महाराज के द्वारा रचित महान आध्यात्मिक ग्रंथ 'समयसार' की गाथाओं का ''गीतिकाछंद'' में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दी रूपान्तर है। इसका प्रकाशन पहली बार बाबू विश्वम्भरदास जैन, हिसार के द्वारा 1947 में कराया गया।

आचार्य कुंदकुंद स्वामी के दो अन्य ग्रन्थों अष्टपाहुड और नियमसार का पद्यानुवाद भी आचार्य महाराज ने बड़ी सरलता से किया, जिनका प्रकाशन क्रमशः श्रेयोमार्ग और जैन गजट (1956-57) में हुआ है। आचार्य समन्तभद्र स्वामी के देवागम स्तोत्र का पद्यानुवाद भी जैनगजट में प्रकाशित हुआ है।

आचार्य कुंद कुंद स्वामी के समयसार ग्रंथ पर आचार्य जयसेन स्वामी द्वारा लिखी गई तात्पर्यवृत्ति नाम की टीका का हिन्दी अनुवाद एवं सारगर्भित भावार्थ आचार्य महाराज ने किया है, जो हर मोक्षमार्गी के लिये पाथेय की तरह अत्यन्त उपयोगी है।

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने इस तरह अपने प्रखर ज्ञान के द्वारा जैन धर्म और दर्शन की ही नहीं, वरन् संस्कृत और हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि में अनुकरणीय योगदान किया है। उनके निष्काम जीवन से व्यक्ति को नैतिक और धार्मिक उत्थान की दिशा मिली है। उनके द्वारा दीक्षित आचार्य विद्यासागर जी मानो उनकी जीवन्त कृति हैं, जो निरन्तर प्रकाशित होकर प्राणी मात्र को आत्मप्रकाश दे रहे हैं।

'विद्यासागर की लहरें' से साभार

पंचम जैन विज्ञान विचार संगोष्ठी

14 जून से 16 जून 2002 तक भट्टारक जी की नसियाँ, जयपुर, में मुनि श्री क्षमासागर जी एवं मुनि श्री भव्य सागर जी की प्रेरणा से पाँचवी जैन विज्ञान विचार संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

पाँच सत्रों में विभाजित इस संगोष्ठी के प्रथम सत्र की शुरुआत डॉ. अशोक जैन, प्रोफेसर, वनस्पतिशास्त्र, ग्वालियर द्वारा जो कि इस संगोष्ठी के संयोजक भी थे, की गई। उन्होंने मूर्ति, मंदिर और पुरानी पांडुलिपियों के क्षरण, रोकथाम और बचाव पर अपने शोध के परिणामों को प्रस्तुत किया।

द्वितीय सत्र में पं. जयकुमार उपाध्ये, नई दिल्ली ने जैनधर्म और वास्तु पर अपना आलेख प्रस्तुत किया। मंदिर, मूर्ति, गर्भगृह एवं सामान्य गृहस्थों के आवास गृहों के वास्तु पर चर्चा करते हुए उन्होंने घंटा आदि आठ मंगल द्रव्यों के वास्तु पर प्रभावों के बारे में विस्तार से बताया।

द्वितीय दिवस, तीसरे सत्र में पं. नरेन्द्रप्रकाश जी जैन, फिरोजाबाद, संपादक, 'जैन गजट' ने वर्तमान समय में सामाजिक विभिन्नताओं और विषमताओं के बीच सामंजस्य की आवश्यकता पर विचार व्यक्त किये। अपने अनुभवशील एवं गहन चिंतन के आधार पर चार तरह के अनुरागों पर चर्चा करते हुए पं. नरेन्द्र प्रकाश जी ने उपस्थित जनसमुदाय को सामाजिक एकता के विविध पक्षों पर सोचने के लिए विवश कर दिया।

संगोष्ठी के चौथे सत्र में श्री आर.सी.जैन, प्रोफेसर, एम.ए.सी.टी. भोपाल ने चित्रों के द्वारा मोहनजोदड़ो-हड़प्पा सभ्यता के अवशेषों को दिखाया एवं उन अवशेषों में दिगम्बर मुद्रा होने के प्रमाण प्रस्तुत किये। अवशेषों की लिपि को भी उन्होंने अनुवादित कर बताया। इसी सत्र में द्वितीय वक्ता के रूप में पं. शीतलचन्द्र जी, प्राचार्य, जैन श्रमण संस्थान, सांगानेर ने जैन व्रत और पर्वो पर अपना आलेख प्रस्तुत किया।

तीसरे दिन संगोष्ठी के समापन सत्र में प्रथम वक्ता के रूप में श्री सुरेश जैन, आई.ए.एस., भोपाल द्वारा पर्यावरण संरक्षण में जैन सिद्धान्तों की भूमिका पर अपना आलेख प्रस्तुत किया गया। उन्होंने बताया कि अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण में जैन धर्म के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों का अत्यधिक योगदान है।

समापन सत्र के दूसरे वक्ता प्रो. रतनचन्द्र जैन, भोपाल संपादक 'जिनभाषित' द्वारा 'इन्द्रिय दमन के मनोविज्ञान' पर अपने विचार व्यक्त किये गये। आधुनिक युग में मनोवैज्ञानिक फ्रायड ने दमन की आलोचना की है। फ्रायड के अनुसार दमन विकृतियों को जन्म देता है, परन्तु जैन दर्शन के अनुसार इन्द्रिय दमन हानिकारक नहीं, बल्कि स्वास्थ्यप्रद और शान्तिप्रद है।

मुनि श्री क्षमासागर जी द्वारा संगोष्ठी के प्रत्येक सत्र में श्रोताओं की जिज्ञासाओं का समाधान किया गया और जेनेटिक इंजीनियरिंग, जीनोम, क्लोनिंग एवं खाद्य सामग्रियों की मर्यादा के वैज्ञानिक पहलुओं पर महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक जानकारी दी गई।

संगोष्ठी का आयोजन जैन सोशल ग्रुप्स, राजस्थान जैन साहित्य परिषद्, एवं समस्त दिगम्बर जैन महिला मण्डल जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया। सभी श्रोताओं का पंजीयन कर उन्हें किट प्रदान की गई। श्रोताओं ने समूचे विशलेषण को गंभीरता से सुनकर उस पर खुले मन से चर्चा की। श्री महावीर जी तीर्थ क्षेत्र एवं भट्टारक जी की नसियाँ, जयपुर के अध्यक्ष श्री एन.के.सेठी ने अपने सतत रचनात्मक सहयोग एवं मार्गदर्शन से संगोष्ठी को सफल बनाया।

डॉ. निशा जैन, मैत्री समूह, भोपाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्यश्री ज्ञानसागरजी के विपुल साहित्य पर हुए एवं हो रहे शोधकार्य

डॉ. शीतलचन्द्र जैन

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज के द्वारा सृजित संस्कृत एवं राष्ट्रभाषा के विपुल वाङ्मय को पाकर साहित्य मनीषियों के हृदय में अपूर्व पुलकन हो उठी। प्रौढ़ भाषा में लिखित होकर भी जनसामान्य तक को हृदयंगम करा देने वाली विशिष्ट शैली में आपके इस साहित्य पर अनेक विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत शोधकार्य हुए एवं हो रहे हैं, जिनमें से कुछ निम्न हैं-

1. डॉ. किरण टण्डन, प्राध्यापक-संस्कृत विभाग, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तरांचल ने विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष डॉ. हरिनारायण दीक्षित के निर्देशन में 'मुनि श्री ज्ञानसागर का व्यक्तित्व एवं उनके संस्कृतकाव्य ग्रंथों का साहित्यिक मूल्यांकन' नाम से पी.एच.डी. का शोध कार्य सन्1978 में पूर्ण किया था। उक्त शोध प्रबंध 'महाकवि ज्ञानसागर के काव्य: एक अध्ययन' के नाम से ईस्टर्न बुक लिंकर्स, 5825, न्यू चन्द्रावल, जवाहर नगर, दिल्ली- 110007 से प्रकाशित हुआ है। यह शोध प्रबन्ध आचार्य ज्ञानसागर वागर्थ विमर्श केन्द्र, सेठ जी की नसियां, ब्यावर-305 901 (अजमेर) राज. एवं भगवान् ऋषभदेव ग्रन्थमाला, श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर-303 902 (जयपुर) राजस्थान से संयुक्त रूप में पुनर्मुद्रित हो चुका है।

2. डॉ. कैलाशपति पाण्डेय ने डॉ. दशरथ द्विवेदी प्राध्यापक-संस्कृत विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय, उत्तरप्रदेश के निर्देशन में ''जयोदय महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन'' विषय पर पी.एच-डी. शोध उपाधि 1981 में प्राप्त की। यह शोध प्रबन्ध अब भगवान् ऋषभदेव ग्रन्थमाला, श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर 303902 (जयपुर) राज. से प्रकाशित एवं उपलब्ध है।

3. डॉ. आराधना जैन (मील रोड, हितकारिणी धर्मशाला, के पास गंजबासौदा- 464221 (विदिशा) मध्यप्रदेश ने बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल के प्राकृत एवं तुलनात्मक विभाग के पूर्वप्राध्यापक डॉ. रतनचन्द्र जैन (137, आराधना नगर, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) फोन 0755-776666) के निर्देशन में ''जयोदय महाकाव्य: एक अनुशीलन ''विषय पर पी.एच-डी. की शोध उपाधि प्राप्त की। उक्त शोधप्रबन्ध''''जयोदय प्रकाशन का शैली वैज्ञानिक अनुशीलन'' नाम से मुनिसंघ वैय्यावृत्य समिति, स्टेशन रोड़, गंजबासौदा (विदिशा) से प्रकाशित हुआ है। भगवान् ऋषभदेव ग्रन्थमाला, श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर- 303902 (जयपुर) राज. से पुनर्मुद्रित होकर उपलब्ध है।

४. डॉ. शिवाश्रमण (धर्मपत्नी श्री सुभाषचन्द्र जैन, भव्य भवन, गढ़ाफाटक, जबलपुर - 482002 (म.प्र.)) ने डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर के संस्कृत विभागान्तर्गत प्रवाचिका डॉ. कुसुम भूरिया के निर्देशन में सन् 1986 में ''संस्कृत जैन चम्पू काव्य: एक अध्ययन'' विषय के अन्तर्गत आचार्य ज्ञानसागर जी के द्वारा लिखित 'दयोदय चम्पू' काव्य को भी सम्मिलित किया है। यह प्रबन्ध अद्यावधि अप्रकाशित है।

5. डॉ. नरेन्द्र सिंह राजपूत (प्राध्यापक-शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, पटेरा (दमोह) म.प्र.) ने डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर म.प्र. के अन्तर्गत डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' (पूर्व प्राध्यापक-संस्कृत विभाग 28, सरोज सदन, सरस्वती कालोनी दमोह- 470 661 म.प्र.) के निर्देशन में ''संस्कृत काव्य के विकास में बीसवीं शताब्दी के जैन मनीषियों का योगदान'' विषय पर पी.एच-डी. हेतु शोधकार्य किया है। इस शोध प्रबन्ध में आचार्य ज्ञानसागरजी द्वारा आलेखित संस्कृत वाङ्मय पर शोधात्मक विमर्श किया गया है। यह शोध प्रबन्ध श्री भगवान् ऋषभदेव ग्रन्थमाला, सांगानेर (जयपुर) राज. से प्रकाशित हो चुका है।

6. डॉ. दयानन्द ओझा ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.) के अन्तर्गत डॉ. जे.एस.एल. त्रिपाठी प्राध्यापक-संस्कृत विभाग, वाराणसी एवं डॉ. सागरमल जैन, निदेशक-पार्श्वनाथ विद्यापीठ वाराणसी के मार्गदर्शन में ''जयोदय महाकाव्य का आलोचनात्मक अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की, यह अप्रकाशित है।

7. कुमायूँ विश्वविद्यालय नैनाताल (उत्तरांचल) के संस्कृत-विभागाध्यक्ष डॉ. हरिनारायण दीक्षित के मार्गदर्शन में वीना वर्मा ने ''समुद्रदत्त चरित्र का समीक्षात्मक अध्ययन'' विषय पर लघु शोधप्रबन्ध आलेखित किया। यह अद्यावधि अप्रकाशित है।

8. लीला बोहरा ने कुमायुँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तरांचल) के संस्कृत विभाग की प्राध्यापिका डॉ. किरण टण्डन के कुशल मार्गदर्शन में ''महाकवि ज्ञानसागर प्रणीत वीरोदय महाकव्य का समग्र अध्ययन'' विषय पर सन् 1987 में पीएच.डी. का शोध प्रबंध लिखकर उपाधि प्राप्त की।

9. डॉ. अजितकुमार जैन, प्राध्यापक-संस्कृत विभाग-के.ए. (पी.जी.) कॉलेज, कासगंज उ.प्र. के द्वारा डॉ. वी.आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा (उ.प्र.) के अन्तर्गत ''जैनाचार्य महाकवि ज्ञानसागर प्रणीत संस्कृत साहित्य की दार्शनिक मीमांसा'' विषय पर डी.लिट्. हेतु शोध प्रबन्ध कार्य जारी है।

10. महाराजा स्वशासी महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) के सहा. प्राध्यापक बहादुर सिंह परमार के मार्गदर्शन में श्रीमती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभा सिंघई (सुपुत्री पं. खुशालचन्द्र शास्त्री, पोस्टमास्टर बड़ा मलहरा छतरपुर 471311 म.प्र.)ने ''आचार्य ज्ञानसागर की हिन्दी साहित्यिक कृतियों का अनुशीलन'' विषय पर लघुशोध प्रबन्ध सन् 1997 में लिखा।

11. सुश्री मीना जैन (प्रसन्न कुमार जैन, 63, सरायपुरा, ललितपुर, उ.प्र.) ने डॉ. रमेशचन्द्र जैन प्राध्यापक संस्कृत-विभाग वर्द्धमान कॉलेज, बिजनौर उ.प्र. के निर्देशन में महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली उ.प्र. के अन्तर्गत महाकवि ज्ञानसागर के साहित्य में 'पर्यावरण संरक्षण : एक अध्ययन' विषय लेकर पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की।

12. सुश्री नीता जैन (सुपुत्री श्री चुन्नीलाल जैन, स्टेट बैंक के पास, सिविल लाइन्स, ललितपुर, उत्तरप्रदेश) ने महात्मा ज्योतिबाफुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली उत्तरप्रदेश के अन्तर्गत डॉ. रमेशचन्द्र जैन (प्राध्यापक-संस्कृत विभाग, वर्द्धमान कॉलेज, बिजनौर, उत्तरप्रदेश) के मार्गदर्शन में ''आचार्य श्री ज्ञानसागर के महाकाव्यों में प्रतिपादित भारतीय संस्कृति'' विषय पर पीएच.डी. शोध उपाधि प्राप्त की।

13. नरोत्तमलाल शर्मा (प्रधानाध्यापक-राजकीय प्रवेशिका संस्कृत विद्यालय, खेतड़ी (झुन्झुनु) राजस्थान) के द्वारा डॉ. बी.एल. सेठी इतिहास विभाग-सेठ मोतीलाल स्नाताकोत्तर महाविद्यालय, झुन्झुनु, राजस्थान के निर्देशन में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के अन्तर्गत ''आचार्य ज्ञानसागर विरचित जयोदय महाकाव्य: एक सांस्कृतिक अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. का शोध प्रबन्ध लिखा जा रहा है।

14. सुश्री सविता जैन (द्वारा- अनिलकुमार जैन, विजय टॉकीज रोड, माता मढ़िया के पीछे, सागर, मध्यप्रदेश) के द्वारा डॉ. ओ.पी.हर्ष (प्राध्यापक एवं अध्यक्ष-संस्कृत विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,भोपाल) के निर्देशन में बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल के अन्तर्गत ''जयोदय और बृहत्त्रयी का तुलनात्मक अनुशीलन'' विषय पर पीएच.डी. का शोध प्रबन्ध लिखा गया।

15. सांवरमल पाटनी (व्याख्याता-इतिहास, राजश्री कल्याण सीनियर माध्यमिक विद्यालय, सीकर राजस्थान) के द्वारा राजस्थान विद्यालय, जयपुर के अन्तर्गत डॉ. बी.एल. सेठी, प्राध्यापक एवं अध्यक्ष-इतिहास विभाग-सेठ मोतीलाल स्नातकोत्तर महा. झुन्झुनु, राजस्थान) के मार्गदर्शन में ''पीएच.डी. हेतु शोध प्रबंध लिखा जा रहा है।

16. महात्मा ज्योतिबा फुले विश्वविद्यालय, बरेली उ.प्र. के अन्तर्गत श्रीमति हेमा शर्मा ने ''वीरोदेव महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. शोध उपाधि प्राप्त की।

17. सुश्री राजुल जैन (द्वारा-चक्रेश टड़ैया मांझ जैन मंदिर के सामने, टीकमगढ़, मध्यप्रदेश) के द्वारा डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर के अन्तर्गत डॉ. के.एल. जैन (हिन्दी विभागाध्यक्ष शासकीय महाविद्यालय, टीकमगढ़, मध्यप्रदेश) के निर्देशन में ''आचार्य ज्ञानसागर के हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

18. हेमन्त रावत (2/2 त्रिदेवीनगर, इन्दौर, मध्यप्रदेश) के द्वारा डॉ. संगीता मेहरा (सहायक प्राध्यापिका-संस्कृत विभाग, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर, मध्यप्रदेश) के निर्देशन में ''आचार्य ज्ञानसागर प्रणीत वीरोदय काव्य की सूक्तियाँ'' विषय पर शोध प्रबन्ध देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर के अन्तर्गत लिखा गया।

19. श्रीमती विमलेश तंवर के द्वारा डॉ. कपूरचन्द्र जैन (अध्यक्ष-संस्कृत विभाग, कुंदकुंद जैन महाविद्यालय, खतौली मुजफ्फरनगर उत्तरप्रदेश) के मार्गदर्शन में चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तरप्रदेश के अन्तर्गत ''जयोदय महाकाव्य में अलंकार विधान'' विषय पर पीएच.डी. हेतु शोध प्रबंध लिखा जा रहा है।

20. सुश्री सविता जैन (सुपुत्री जिनेन्द्र कुमार जैन, सिंघई सेठ जैन मंदिर के बाजू में, पुराना बाजार नं. 1, दमोह मध्यप्रदेश) के द्वारा प्रो. एस.डी. तिवारी (संस्कृत विभाग, शास. महाविद्यालय दमोह) के निर्देशन में डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर के अन्तर्गत ''जयोदय महाकाव्य एवं नैषधीय चरित्र का तुलनात्मक अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. उपाधि प्राप्त करने के लिए शोध प्रबन्ध लिखा जा रहा है।

21. कैलाशचन्द्र शर्मा ने डॉ. शीतलचन्द्र जैन (प्राचार्य-श्री दिगम्बर जैन आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, मनिहारों का रास्ता,जयपुर) के निर्देशन में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान के अन्तर्गत ''सुदर्शनोदय काव्य : काव्यशास्त्रीय अध्ययन'' विषय पर पीएच.डी. शोध उपाधि सन् 2001 में प्राप्त की।

22. श्री दिगम्बर जैन आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, मनिहारों का रास्ता, जयपुर राजस्थान के शोध छात्र राकेश कुमार जैन महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. शीतलचन्द्र जैन के मार्गदर्शन में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) के अन्तर्गत ''वीरोदय महाकाव्यस्य दार्शनिकमनुशीलनम्'' विषय पर विद्यावारिधि (पीएच.डी.) उपाधि प्राप्त करने के लिए शोधकार्यरत है।

इनके अतिरिक्त साहित्यवारिधि आचार्यप्रवर श्री ज्ञानसागर जी के साहित्यरत्नाकर का समुचित मंथन मुनि श्री सुधासागर जी के ससंघ सान्निध्य में आयोजित पाँच राष्ट्रीय संगोष्ठियों में हुआ है। शताधिक साहित्य मनीषियों द्वारा अखिल भारतीय विद्वत् संगोष्ठियों में पठित आलेख भगवान् ऋषभदेव ग्रन्थमाला, सांगानेर, जयपुर से ग्रन्थ रूप में क्रमश: ''आचार्य ज्ञानसागर की साहित्य साधना एवं सांगानेर'' 'जिन बिम्बदर्शन' 'कीर्तिस्तम्भ' 'लघुत्रयीमंथन' ''जयोदय महाकाव्य परिशीलन'' एवं महाकवि आचार्य ज्ञानसागर अध्यात्मसन्दोहन'' शीर्षकों से प्रकाशित हुए हैं।

दि. जैन संस्कृत महाविद्यालय
मनिहारों का रास्ता, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीतरागता की पराकाष्ठा

मुनि श्री क्षमासागर जी

''यह वीतरागता की पराकाष्ठा थी। अहं के विसर्जन और समर्पण की अद्भुत वेला थी। अपने जिस शिष्य को आज तक हाथ पकड़कर लिखना-पढ़ना, बोलना और चलना सिखाया, आज उसे ही अपना आचार्य बना लिया।''

'आत्मान्वेषी' मुनिश्री क्षमासागर जी द्वारा आचार्य श्री विद्यासागर जी की मातृश्री के मुख से कहलवाया गया एक कथाग्रन्थ है, जिसमें परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी एवं उनके गुरु परमपूज्य आचार्य श्री ज्ञानसागर जी के लोकोत्तर जीवनवृत्तों का हृदयस्पर्शी चित्रण है।

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी ने वीतरागता की जिस पराकाष्ठा का स्पर्श किया था, उसका हृदयद्रावक शब्दचित्र लेखक की भावुक, संवेदनशील लेखनी ने कागज पर उतारा है।

समय बीतता गया। यह सन् उन्नीस सौ बहत्तर की बात है, जब एक दिन तुम्हें अपने अत्यन्त समीप बिठाकर आचार्य महाराज ने शान्त-भाव से कहा था कि ''मेरी आयु का अन्त निकट है, मैं अपना आचार्य-पद तुम्हें देकर इस दायित्व से मुक्त होना चाहता हूँ।'' इतने बड़े दायित्व की बात सुनकर तुम चकित हुए। तुमने सोचा भी नहीं था कि अपने गुरु के रहते हुए यह दायित्व तुम्हें सँभालना होगा। सो तत्क्षण अपना माथा आचार्य महाराज के श्रीचरणों में रखकर तुमने अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। अत्यन्त विनतभाव से इतना ही कहा कि ''इन चरणों की छाया में रहूँ, मुझे यह जो आपका सहारा है उसे बना रहने दें। मैं आचार्य-पद के योग्य नहीं हूँ।''

तुम्हारे इस आत्मनिवेदन को सुनकर आचार्य महाराज क्षण भर को सोच में पड़ गए। पद के प्रति तुम्हारी निर्लिप्तता वे जानते थे और यह भी जानते थे कि तुम आसानी से इस दायित्व को ग्रहण नहीं करोगे। यही विशेषता तो तुम्हें इस श्रेष्ठपद के योग्य साबित करती है।

आचार्य महाराज ने कुछ सोचकर पुनः कहा कि ''देखो अंतिम समय आचार्य को अपने पद से मुक्त होकर, अन्य किसी संघ की शरण में, सल्लेखनापूर्वक देह का परित्याग करना चाहिए। यही संयम की उपलब्धि है और यही आगम की आज्ञा भी है। अब मैं इतना समर्थ नहीं हूँ कि अन्यत्र किसी योग्य आचार्य की शरण में पहुँच सकूँ, सो मेरे आत्म-कल्याण में तुम सहायक बनो और आचार्य-पद सँभालकर मेरी सल्लेखना कराओ। यही मेरी भावना है।''

इतना सब सुनकर भी तुमने स्वीकृति नहीं दी, तब आखिरी बात उन्होंने कह दी कि ''आज मैं तुमसे गुरु-दक्षिणा माँगता हूँ विद्यासागर, और गुरुदक्षिणा में यही चाहता हूँ कि तुम सहर्ष आचार्य-पद का गुरुतर दायित्व सँभाल लो।'' अब तुम निरुपाय हो गए। अपने गुरु के प्रति अगाध स्नेह और समर्पण की मानो यह परीक्षा थी। यही शिष्यत्व की पहचान थी। सो पूरे आत्म-विश्वास और आत्म-समर्पण के साथ तुमने अपना माथा आचार्य महाराज के श्रीचरणों में रख दिया और पाया कि गुरु का वरदहस्त तुम्हें आश्वस्त और अभीत होने के लिए कह रहा है।

आचार्य महाराज को पहली बार इतने हर्ष-मिश्रित और विगलित स्वरों में कहते सुना गया कि ''विद्यासागर! तुम निश्चिंत होओ। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा। मैंने तुम्हें वह सब सिखा दिया है जो मोक्षमार्ग पर चलने वाले साधक के लिए आवश्यक है। तुम्हें अब कहीं कुछ और सीखने नहीं जाना है। अपने आत्म-स्वरूप में निरन्तर विचरण करते रहना और निःसंग रहकर भी श्रमणसंघ को गुरुकुल बनाना। जो मोक्षमार्ग पर चलने के लिए समर्पितभाव से समीप आए उसे शरण देना और स्वयं अनासक्त रहकर अपने आचरण में तत्पर रहना।''

आचार्य महाराज के द्वारा तुम्हें आचार्य-पद प्रदान करने की खबर सब ओर फैलने लगी। लोग उत्सुकता से उस पावन क्षण की प्रतीक्षा करने लगे। नसीराबाद की माटी को इस आयोजन का सौभाग्य मिल गया। आचार्य महाराज ने समस्त संघ की उपस्थिति में तुम्हें आचार्य-पीठिका पर बिठाकर आचार्य-पद पर प्रतिष्ठित करने और स्वयं उस पद से मुक्त होने की सारी विधि सहज ही सम्पन्न कर दी। जय-जयकार की ध्वनि से वातावरण गूँज उठा।

अचानक सबने देखा कि तुम्हें आचार्यपद पर प्रतिष्ठित करने वाले गुरु ज्ञानसागर तुम्हारे सामने बैठकर कुछ निवेदन कर रहे हैं। सब ओर सन्नाटा छा गया। अत्यन्त दृढ़, लेकिन विनम्र स्वरों में श्री ज्ञानसागर जी महाराज को सभी ने यह कहते सुना कि ''हे आचार्य महाराज! मैं अपना अंतिम समय समीप जानकर आपके श्रीचरणों में सल्लेखना की याचना करता हूँ। आप मुझ पर अनुग्रह करें।''

यह वीतरागता की पराकाष्ठा थी। अहं के विसर्जन और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समर्पण की अद्भुत बेला थी। अपने जिस शिष्य को आज तक हाथ पकड़ कर लिखना-पढ़ना, बोलना और चलना सिखाया, आज उसे ही अपना आचार्य बना लिया। इतना ही नहीं, अपना शेष जीवन उसके सुदृढ़ हाथों में सौंप दिया। जिसने सुना और जिसने देखा उसका मन भर आया। आँखें सजल हो उठीं। एक बार फिर श्रमणधर्म और श्रमणसंघ की जय-जयकार हुई। आज पूज्य ज्ञानसागर जी महाराज की विनय देखते ही बनती थी। वे अपना सर्वस्व सौंपकर मानो पूर्ण-काम हो गए थे।

उन क्षणों में तुम्हारे चेहरे पर दमकता आत्म-तेज भले ही सभी ने देखा हो, पर श्रद्धा से भरी सजल आँखें कोई नहीं देख पाया। मैं जानती हूँ कि ऐसे समय में तुम्हारा मन कितना भर आया होगा। तुम अपने ही भीतर के एकान्त में समाते चले गए होगे और सोच रहे होगे कि कहीं जरा-सा अवकाश, जरा-सी जगह मिले और अपने को छिपा लूँ। अपनी योग्यता का ऐसा सम्मान तुमने कभी नहीं चाहा। योग्यता पा लेना अपने आप में परिपूर्ण सम्मान है।

सचमुच,कंचन और कामिनी को छोड़ना जितना आसान है, यश और ख्याति की लालसा को छोड़ पाना उतना आसान नहीं है। पर इन क्षणों में तुम्हारे गुरु ने और स्वयं तुमने अपनी आत्म-निर्मलता को पाने के लिए मान-सम्मान और यश-ख्याति सभी की लालसा छोड़ दी। इस विशेषता के सामने सारे विशेषण फीके मालूम पड़ते हैं। आज मन करता है कि कहूँ, तुम विशेषणों के विशेषण हो। तुम्हें इस तरह निरन्तर ऊँचाइयाँ पाते और आगे बढ़ते देखती या सुनती हूँ, तब मन ही मन खुश हो लेती हूँ। भगवान से प्रार्थना करती हूँ कि तुम जहाँ भी रहो, अच्छे से रहो। तुम भले ही मुझे अपनी माँ मत कहो, पर मैं तो अभी भी तुम्हारी माँ हूँ। तुम्हारे शुभाशीष से कभी इन संबंधों के पार होने का प्रयास करूँगी। तुम्हारे भीतर प्रकट हुए आचार्यत्व को प्रणाम करती हूँ।

देखती हूँ कि अभी तक तुम निश्चिन्त थे। गुरु का हाथ तुम्हें थामे था। अब जिम्मेदारी तुम्हारी है। अपने ही श्रीगुरु को सँभालना है। मोह-मुक्त होकर उनके आत्म-कल्याण में सहभागी बनना है। तुम इस दायित्व को समझ रहे हो। श्रमण होने के नाते आत्म-साधना और समत्व के प्रति तुम पहले ही सजग थे। अब आचार्यत्व की गरिमा के अनुरूप सजगता और बढ़ गई है। पहले अपने गुरु का हाथ थाम कर तुम चलते थे, अब तुम्हारा हाथ थामकर गुरु महाराज चलते हैं। बाहर से तो पूर्ववत् हाथ में हाथ दिखाई देता है, लेकिन अंतस् चेतना की गहराई में हुए परिवर्तन के तुम स्वयं साक्षी हो।

मोक्षमार्ग पर एक अकेले स्वयं चलना फिर भी आसान है, लेकिन स्वयं चलते हुए दूसरे के लिए चलने में सहयोगी बनना एकदम आसान नहीं है। सुबह से शाम और बहुत रात होने तक तुम अपने गुरु की सेवा में अथक लगे रहते थे। तुम्हारे सारे आवश्यक उनकी सेवा में समा गए। मानो गुरु की सेवा ही आवश्यक हो गयी थी। उन्हें सहारा देकर आहार व निहार के लिए ले जाना और हाथ बढ़ाते ही उन्हें थाम लेना, इसमें तुम जरा भी आलस नहीं करते थे।

गुरु महाराज भी सजग थे। अपने परिणामों की सँभाल स्वयं करते और तुम्हारे द्वारा दिये जाने वाले सम्बोधन को ध्यान से सुनते थे। जब कभी जाने-अनजाने तुम ग्रन्थ पढ़ते-पढ़ते चूक जाते, तो वे इशारा कर देते थे कि ठीक पढ़ो। उनकी इस सजगता और स्वभाव की ओर दृष्टि देखकर तुम आश्वस्त हो जाते थे। सल्लेखना में यह आत्म-जागरूकता अनिवार्य है।

इस तरह सल्लेखना अबाध रूप में चलती रही। एक दिन वह भी आया जब सल्लेखना की वह साधना पूरी हुई। जीवन भर आत्मस्थ रहने वाले पूज्य ज्ञानसागर जी महाराज समाधिस्थ हो गए। सल्लेखना के दिनों में तुमने जितनी निष्ठा और लगन के साथ अपने गुरु की सेवा की, उसे देखकर लोगों ने मुझसे इतना ही कहा कि अपने पिता से लाखों-करोड़ों की सम्पत्ति पाने वाला बेटा भी इतनी सेवा नहीं कर सकता, जितनी तुमने अपने गुरु की, की है। मोक्षमार्ग में परस्पर एक दूसरे साधक को सँभालना और रत्नत्रय में स्थिर रहकर आत्म-विशुद्धि बढ़ाते रहना, यही सम्यक्त्व की पहचान है। फ़िर तुम तो उस समाधि-साधना के निर्यापक आचार्य थे।

'आत्मान्वेषी' से साभार

सूक्ति

यथोदयेऽह्यस्तमयेऽपि रक्तः श्रीमान् विवस्वान् विभवैकभक्तः।
विपत्सु सम्पत्स्वपि तुल्यतैवमहो तटस्था महतां सदैव ॥

अर्थ- सूर्य जिस प्रकार उदयकाल में लाल रहता है, उसी प्रकार अस्त के समय भी रहता है। महापुरुष सुख और दुःख दोनों में एक समान रहते हैं।

'जयोदय' महाकाव्य १५/२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूरामल से ज्ञानसागर

आचार्य श्री विद्यासागर जी की मातृश्री का अपने पुत्र के प्रति सम्बोधन

आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज खूब सधे हुए साधक थे। उन्होंने अपना सारा जीवन जैनागम के गहन अध्ययन, चिन्तन और मनन में ही बिताया। ब्रह्मचारी, विद्वान भूरामल के नाम से विभिन्न आचार्य संघों में वे साधुजनों को स्वाध्याय भी कराते रहे।

मैंने सुना है कि उनके पिता उन्हें बचपन में ही छोड़कर चल बसे थे। अध्ययन का साधन न होने से वे अपने बड़े भाई के साथ 'गया' चले गए। एक जैन व्यवसायी के यहाँ काम करने लगे, पर मन तो ज्ञान के लिए प्यासा था। सो एक दिन वहाँ से चलकर स्याद्वाद महाविद्यालय, बनारस पहुँच गए। दिन-रात ग्रंथों का अध्ययन करते-करते स्वल्पकाल में ही न्याय, व्याकरण और साहित्य के विद्वान बन गए।

तब कौन जानता था कि बनारस की सड़कों पर अपनी पढ़ाई के लिए हर शाम घंटे भर गमछे बेचकर चार पैसे कमाने वाला वह युवक संस्कृत-साहित्य का ही नहीं, वरन् समूचे जैनागम का मर्मज्ञ हो जाएगा। सचमुच, जिसका श्रम हर रात दीये में स्नेह बनकर जला हो, उसे ज्ञान और वैराग्य का प्रकाश-स्तम्भ बनने से कोई रोक भी तो नहीं सकता। प्रकाण्ड विद्वान होकर भी उन्होंने आचार्य शिवसागर जी महाराज के श्री-चरणों में समर्पित होकर मुनि-दीक्षा अंगीकार कर ली और एक दिन तुम्हें अपना शिष्य बनाकर कृतार्थ कर दिया। उनकी अनेकों कृतियों के बीच तुम पहली जीवन्त कृति थे।

मैंने उनकी साधुता देखी है। वे उन अर्थों में साधु थे, जिन अर्थों में कोई सचमुच साधु होता है। भेद-विज्ञानी होना साधुता की कसौटी है। वे भेद-विज्ञानी थे। भेद-विज्ञानी वह है जो समस्त परिग्रह से मुक्त होकर आत्मानुभूति में तत्पर है। तत्त्वज्ञ तो कोई भी हो सकता है, पर वे तत्त्वद्रष्टा थे। वे शरीर और आत्मा के पृथक्करण की साधना में तत्पर निःस्पृह साधक और सच्चे भेद-विज्ञानी थे।

अपनी आत्मा को साधने में निरन्तर लगे रहने वाले वे अनोखे साधु थे। उन्होंने तनिक भी, कहीं कुछ भी छिपाने की गुंजाइश नहीं रखी। जो जैसा था, उसे उसी रूप में प्रकट कर दिया, इसलिये वे यथाजात नग्न दिगम्बर थे। मैं बड़ा हूँ या कोई छोटा है, इस तरह की ग्रंथि उनके मन में नहीं थी, इसलिए उच्चता और हीनता की ग्रंथियों से परे वे निर्ग्रन्थ थे।

ग्रन्थ के हर गूढ़ रहस्य को, हर गुत्थी को सहज ही सुलझा देना और अपने जीवन को जीवन्त-ग्रन्थ बना लेना, यह उनकी निर्ग्रन्थता की शान थी। अपने जीवन में उन्होंने जो भी लिखा वह अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य की रोशनाई से लिखा, तब जो भी उनके समीप आया वह निर्ग्रन्थ होने के लिए आतुर हो उठा।

मैंने देखा है कि संसार के मार्ग पर, जहाँ लोग निरन्तर विषय-सामग्री पाने दौड़ रहे हैं, वे अविचल खड़े हैं और मोक्षमार्ग पर, जहाँ कि लोगों के पैर आगे बढ़ नहीं पाते, वे निरन्तर आगे बढ़ रहे हैं। अतीत की स्मृति और अनागत की आकांक्षा जिन्हें पल भर भी भ्रमित नहीं कर पाती, ऐसे अपने आत्म-स्वरूप में निरन्तर सजग और सावधान गुरु को पाकर तुम्हारा जीवन धन्य हो गया।

'आत्मान्वेषी' से साभार

अभी-अभी दीक्षित होकर आ रहा हूँ

अपने ज्ञानवृद्ध, अनुभववृद्ध और वयोवृद्ध गुरु के श्रीचरणों में बैठकर तुमने जो भी सीखा, उसे देखकर कोई भी आसानी से कह सकता है कि यह ज्ञान अल्पवय में भी व्यक्ति को परिपक्व बनाने में सक्षम है। एक दिन शाम को प्रतिक्रमण करके आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज बाहर दालान में आकर बैठे ही थे कि किसी ने पूछ लिया "महाराज, आप चिरदीक्षित मालूम पड़ते हैं, आपको दीक्षा लिए कितने वर्ष बीत गए ?" महाराज मुस्कराए और बोले कि अभी-अभी दीक्षित होकर आ रहा हूँ। यह बात सुनकर सभी लोग चकित हुए और सोच में पड़ गए कि इसका क्या अर्थ है ? तब आचार्य महाराज ने सहज भाव से समझाया कि "प्रतिक्रमण करके निर्दोष होकर अभी-अभी तो बाहर आया हूँ, सो मानो अभी दीक्षित हुआ हूँ।"

"प्रत्येक श्रमण दोषों से स्वयं को बचाकर आत्म-विशुद्धि को प्राप्त करके नित-नूतन होता जाता है। दीक्षा के वर्ष गिनने से क्या होगा ? मैं चिरदीक्षित हूँ, ज्येष्ठ हूँ, यह अहंकार व्यर्थ है। आत्म-शोधन ही दीक्षा की उपलब्धि है। उसे निरन्तर बनाए रखना ही सच्चा पुरुषार्थ है। सच्ची साधना है।"

'आत्मान्वेषी' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य श्री ज्ञानसागरजी की पूजा

मुनि श्री योगसागर जी

(वसन्ततिलका छन्द)

श्री पूज्य पाद भव तारक ज्ञान-सिन्धू,
पूजा करूँ हृदय से तव पाद वन्दूँ।
अध्यात्म दीप जग में तुमने जलाया,
विद्या सुसागर महाऋषि को बनाया।।

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागर मुनीन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट्
ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागर मुनीन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं
ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागर मुनीन्द्र अत्र मम सन्निहितो भवभव वषट्

जो ज्ञान-गंग-जल में डुबकी लगाते,
यों जन्म मृत्यु स्वयमेव विलीन होते।
आशीष दो यह मुझे, बन ज्ञान साधूँ,
मै भी समाधि जल में डुबकी लगा लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं

अंगार सी विषयराग चहूँ दिशों में,
व्यामोह चित्त मृग ज्यों भटके वनों में।
संसार में यह छवि सबको रमाती,
ज्यों चाँदनी शरद पूनम की सुहाती॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः भव आताप विनाशनाय चन्दनं।

सिद्धान्त के नयन से भलि-भाँति जाना,
हैं विश्व के सब पदार्थ अनित्य माना।
जो धर्म ही अमिट है शरणा दिलाता,
पीयूष सा परम अक्षय सौख्यदाता॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं।

है नागराज-सम काम सता रहा है,
सारा शरीर विष से जल सा रहा है।
ज्यों चन्द्रकांत मणि शीतल सौम्य वाली,
त्यों शील शीतल प्रदायक धर्म वाली॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं॥

घी दूध औ सरस व्यंजन चाहती है,
तो भी क्षुधा उदर की मिटती नहीं है।
आत्मानुभूति रस से वह तृप्त होती,
जो ज्ञान-ध्यान-तप से वह प्राप्त होती॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं।

जैनेन्द्र यज्ञ तप को अपना लिया है,
दुष्टाष्टकर्म-दल तो जलने लगे हैं।
आनन्दगन्ध निज में बहने लगी है,
निर्गन्ध वस्तु जग की लगने लगी है॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं।

शुद्धात्म वृक्ष पर ही फल मोक्ष पाता,
त्रैलोक्य में अनुपमम् रसवान होता।
सर्वस्व त्याग करके वह योग साधा,
हैं मोक्ष के निकट ही जिसमें न बाधा॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः मोक्ष फलप्राप्तये फलं।

वैराग्य-मूर्ति लख के मन शान्त होता,
जो भेद ज्ञान स्वयमेव सुजाग जाता।
विश्वास है वरद-हस्त हमें मिला है,
संसार चक्र जिसमें भ्रमना नहीं है॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घम्।

दोहा

ज्ञानार्णव आचार्य की, गाता हूँ जयमाल,
सम्यक्त्व कमल खिल उठे, खुलता मन का जाल।
चित्त पपीहा के लिये, ज्ञानामृत की धार,
मोह जहर अपहार को, गरुड मन्त्र सा वार॥

जयमाला

वात्सल्य का कमल पुष्प खिला हुआ था,
वैराग्य केसर सुगन्ध बहा रहा था।
जो ज्ञान नीर जिस बीच सुशोभता था,
संवेग का हरित पत्र लिया हुआ था॥
मैं कोटि-कोटि उर से करता प्रणाम,
जो नाम के स्मरण से मिलता सुशर्म।
जो ख्याति लाभ जन-रंजन से परे थे,
निस्वार्थ पूर्ण अति उज्ज्वल संयमी थे॥
थे ज्ञान-वृद्ध, तप-वृद्ध, वयो-सुवृद्ध,
थे कल्पवृक्ष सम शीतल शान्त शुद्ध।
अध्यात्म के अमृत में निज को रमाते,
ऐसे महाश्रमण का गुणगान गाते॥
साहित्य का सृजन संस्कृत में किये हैं,
लालित्यपूर्ण मनमोहक लेखनी है।
है आपका इक जयोदय काव्य न्यारा,
आश्चर्य है अतुलनीय महान प्यारा॥
आचार्यवर्य शिवसागर थे कृपालु,
थे पट्टशिष्य उनके सब में दयालु।
अन्वर्थ नाम रख के गुरु ने उठाया,
श्री ज्ञानसागर सुनाम हमें सुहाया॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्यज्ञानसागरेभ्यः अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यम्

दोहा

गुरु ही तो शिव रूप है, शिव ही है गुरु रूप।
शिव गुरु का ना भेद है, गुरु ही शिव का रूप॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य ज्ञानसागर जी का हिन्दी साहित्य वर्तमान संदर्भ में

डॉ. राजुल जैन

कुण्डलपुर संगोष्ठी में पठित शोधपत्र

भारतीय संस्कृति के इतिहास में संत साहित्यकार का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इन संतों ने जहाँ एक ओर अपनी साधना और तपस्या के बल पर आत्मकल्याण किया है, वहीं दूसरी ओर अज्ञानता के कारण भटके हुए समाज को भी एक ऐसी दिशा दी है, जिससे वह अपने जीवन के समस्त कष्ट और दुखों से मुक्ति पा सके।

इस पंचमकाल में जैनाचार्यों में महाकवि आचार्य ज्ञानसागर जी ने अपने अपरिमित ज्ञान, भक्ति, करुणा, अहिंसा, काव्य रचना और वैराग्य के द्वारा जो अलौकिक आनंद इस धरित्री पर बिखेरा था, उससे तत्कालीन समय में अधिकतम लोग चमत्कृत होकर उनके प्रति श्रद्धावनत हुए थे।

साहित्य को आमतौर पर समाज का दर्पण माना जाता है। समाज की इकाई के रूप में हम साहित्य के अंतर्गत मनुष्य का अध्ययन करते हैं। यदि हम हिन्दी साहित्य पर दृष्टि डालें तो हमें ज्ञात होता है कि साहित्य के केन्द्र में मूलरूप से मानव ही है। मानवीय मूल्यों के उदात्त स्वरूप और हीनतम भावनाओं का स्वरूप भी हमें साहित्य में नाना रूपों में देखने को मिलता है। साहित्य, मनुष्य की आंतरिक और बाह्य प्रवृत्तियों को समग्रता के साथ अभिव्यंजित करता है। वर्तमान समय में साहित्य में मुख्य रूप से खण्डित मूल्यों की चर्चा की जा रही है, क्योंकि मूल्य ही हमारे जीवन का सही अर्थों में निर्माण करते हैं और उन्हीं की बदौलत हम अपने साहित्य और संस्कृति पर गौरव और गर्व की अनुभूति कर पाते हैं। आचार्य ज्ञानसागर ने भी अपनी साहित्यिक कृतियों के माध्यम से उदात्त मूल्यों की चर्चा की है, वहीं संस्कारों के माध्यम से व्यक्ति को संस्कारित कर उसके अंत:करण में शुचिता को जाग्रत किया है। यह शुचिता ही व्यक्ति के लिए कल्याणपथ का पाथेय बनती है।

आचार्य ज्ञानसागर जी ने संस्कृत के अनेक महाकाव्यों का सृजन किया। वहीं हिन्दी में भी अनेक कृतियों की रचना कर समाज को सत्पथ पर अग्रसर होने के लिये प्रेरित किया। यहाँ पर हमारा मुख्य प्रयोजन आचार्य ज्ञानसागर द्वारा रचित हिन्दी साहित्य की कृतियों को वर्तमान संदर्भ में समीक्षा की दृष्टि से रेखांकित करना है।

आचार्य महाराज की लेखनी से प्रसूत 'भाग्यपरीक्षा' उनकी प्रथम हिन्दी कृति है। उन्होंने इसके माध्यम से संयुक्त परिवारप्रथा के औचित्य का प्रतिपादन किया है। मनुष्य का जीवन सदैव से संघर्षशील रहा है। मनुष्य अपने पुरुषार्थ के बल पर जीवन में आने वाली विविध प्रकार की बाधाओं पर विजय प्राप्त करता है। अकर्मण्यता हमारे जीवन के लिए अभिशाप है और कर्मठता जीवन के लिए वरदान है। इस कृति के माध्यम से आचार्य ज्ञानसागर मानवीय गुणों के उत्कर्ष की बात कहते हैं।

गृहस्थ जीवन में मनुष्य को किस प्रकार अपनी बुद्धि-कौशल और वाणी चातुर्य के द्वारा धर्म का अनुसरण करते हुए जीवन के मूलभूत उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहिए, इस बात को उन्होंने विशेष रूप से इस कृति में रेखांकित करने का प्रयास किया है। इस पुस्तक के माध्यम से मनुष्य को जीवन जीने का संबल प्राप्त होता है।

आचार्य ज्ञानसागर जी द्वारा रचित 'ऋषभचरित' नामक कृति में तीर्थंकर ऋषभदेव को कथा नायक बनाकर उनके पूर्वभवों का वर्णन किया है। इस कृति का विस्तार सत्रह अध्यायों में हुआ है। यह पुस्तक अनेक उपदेशों के माध्यम से हमें पवित्र जीवन जीने के लिये प्रेरित करती है। दिव्य चरित्रों के द्वारा हमारे अंत:करण में जो पवित्रता का भाव उत्पन्न होता है।

मनुष्य जीवन का श्रेय इस बात पर निर्भर करता है कि वह अपने जीवन में सद्गुणों को धारण कर इस अमूल्य जीवन को सार्थक बनाए, बस इन्हीं सद्गुणों की चर्चा 'गुण सुन्दर वृत्तान्त' नामक कृति में एक व्यक्ति की आत्मकथा के माध्यम से प्रस्तुति की है। उपयोगिता की दृष्टि से निस्संदेह यह कृति काफी महत्त्वपूर्ण है। पौराणिक परम्परा के अनुसार ऐसा माना जाता है कि अनेक योनियों में भ्रमण करने के उपरान्त मनुष्य जीवन उपलब्ध होता है। यह मानव पर्याय अमूल्य होने के साथ-साथ अत्यधिक उपयोगी भी है। इस जीवन की उपयोगिता तभी सच्चे अर्थों में प्रमाणित हो पाती है जब हम इसका उपयोग पारिवारिक परिवेश से बाहर निकलकर दूसरों के लिए करने लगते हैं। परहित का भाव जब मनुष्य के जीवन में उत्पन्न हो जाता है तो मनुष्य के अन्दर सच्चे अर्थों में मानवता का भाव जाग्रत हो जाता है।

निश्चित रूप से यह रचना हमें आज के विसंगत परिवेश में नैतिक जीवन और सदाचार की शिक्षा प्रदान करती है, जो सामयिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

स्वार्थ के संकुचित दायरों में सिमटकर आज का मानव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुत ही तंगदिल हो गया है। मनुष्य के अन्दर जो प्रेम, भाई-चारा, आत्मीयता, संवेदनशीलता, सहानुभूति आदि तत्त्व, ऐसा लगता है, जैसे उसके जीवन से बहुत दूर चले गये हों। आज का मानव इतना अधिक इन्द्रियलोलुप हो गया है कि उसे करणीय और अकरणीय का अन्तर ही समझ नहीं आता है। आचार्य ज्ञानसागर ने 'कर्त्तव्य पथ प्रदर्शन' नामक कृति के माध्यम से मनुष्य को यह संदेश दिया हैं कि कर्त्तव्यपालन के द्वारा व्यक्ति आत्मतोष की अनुभूति कर सकता हैं और जीवन की ऊँचाइयों को हासिल कर सकता है। जैनधर्म भावनाप्रधान है, भावना कर्त्तव्य की प्रेरणा देती है और कर्त्तव्य हमारे जीवन को सुसज्जित करता है। कृति का वैशिष्ट्य शीर्षक से स्वमेव ही स्पष्ट हो जाता है।

संत कहते हैं कि हम जैसी वस्तु को ग्रहण करते हैं, उसी के अनुरूप हमारा मन और आचरण प्रभावित होता है और जैसा ग्रहण करते हैं वैसी ही हमारी वाणी हो जाया करती है।

कहावत है-

जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन।
जैसा पीवे पानी, वैसी होवे वाणी॥

ऐसी स्थिति में मानव को चाहिए कि वह उन पदार्थों का सेवन न करे जो जीवन के लिये अनुपयोगी और कष्टदायक हों। आचार्य ज्ञानसागर ने भक्ष्य-अभक्ष्य की विवेचना 'सचित्त विवेचन' और 'सचित्त विचार' नामक पुस्तक में की है। ये कृतियाँ निश्चित रूप से हमारे जीवन को जहाँ एक ओर पवित्र बनाने का उपक्रम करती हैं, वहीं दूसरी ओर हमें इस बात की प्रेरणा देती हैं कि जीवन में वे कौन-सी वस्तुएँ हैं जो खाने योग्य हैं और कौन-सी खाने योग्य नहीं है। ये कृतियाँ निश्चित रूप से जीवन के लिये अत्यन्त उपयोगी साबित हुई हैं।

आचार्य ज्ञानसागर जी ने 'सरल जैन विवाह विधि' के द्वारा विवाह जैसे पवित्र बन्धन को उलझनविहीन बनाने की दृष्टि से कुछ ऐसे सूत्र प्रदान किए हैं, जिन्हें अपनाकर हम अपना कार्य सरलतापूर्वक स्वयं सम्पन्न कर सकते हैं।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि आचार्य ज्ञानसागर जी की वे कृतियाँ, जो उन्होंने हिन्दी साहित्य को प्रदान की है, निश्चित रूप से अमूल्य हैं, क्योंकि इन कृतियों का सम्बन्ध विशुद्ध रूप से मानव जीवन से है। साहित्य के केन्द्र में मानव ही सर्वोपरि माना गया है, मानव के उत्कर्ष से जुडे हुए जितने भी बिन्दु हैं, वे आचार्य ज्ञानसागर जी के साहित्य में समाहित हैं। अत: यहाँ पर यह कहना ज्यादा उपयुक्त होगा कि आचार्य ज्ञानसागर जी की कृतियाँ मानव कल्याण के लिए ऐसे अनुपम उपहार हैं, जिन्हें काल अपने प्रवाह में प्रवाहित नहीं कर सकता। उनकी कृतियाँ अक्षय निधि के रूप में हमेशाा प्रणम्य रहेंगी।

टीकमगढ़ (म.प्र.)

बालवार्ता

सजा किसे ?

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

एक बार नेपोलियन बोनापार्ट अपनी सैनिक छावनी के पास से गुजर रहा था। उसने देखा कि एक सैनिक एक निश्चित दूरी से आता है और अपने सैन्य अधिकारी को सैल्यूट मारता है। पुन: उसी स्थान पर जाता है और वापिस आकर फिर सैल्यूट मारता है।

नेपोलियन ने उस सैन्य अधिकारी से पूछा -'यह क्या हो रहा है ?'

उस सैन्य अधिकारी ने ज्यों ही सेनापति नेपोलियन बोनापार्ट को देखा तो हड़बड़ाकर सैल्यूट मारा और उत्तर दिया -'सर! इसने सेना के नियमों को तोड़ा है। अत: मैंने इसे अपने कर्त्तव्य (ड्यूटी) का उल्लंघन करने के अपराध में निश्चित दूरी से आकर 100 बार सैल्यूट मारने की सजा दी है।'

नेपोलियन ने यह सुनकर उस सैन्य अधिकारी से कहा - 'तू बड़ा मूर्ख है। दूसरों को ऐसी सजा देने से क्या लाभ, जिसकी सजा तुम्हें भी भोगनी पड़े। उसे तो दण्ड मिला है इसलिए 100 बार सैल्यूट मारने आना पड़ रहा है, किन्तु तुम किस अपराध की सजा भुगत रहे हो, जो उसके 100 बार की सैल्यूट का उत्तर देने के लिए एक ही स्थान पर खड़े हो और बार-बार सैल्यूट का उत्तर सैल्यूट मारकर दे रहे हो ?'

सैन्य अधिकारी को अपनी भूल का अहसास हुआ और उसने उक्त सैनिक को क्षमा करते हुए पुन: ड्यूटी पर जाने का आदेश दिया। उसे अच्छी तरह समझ में आ गया था कि जब हम दूसरों को दु:ख देने की सोचते हैं या दु:ख देते हैं, तब स्वयं भी दु:ख उठाना पड़ते हैं। अत: दूसरों को दु:ख देने के स्थान पर समभाव रखना चाहिए।

झूठ	सच
झूठ बोलना पाप है बच्चो	सत्य कहो तो शान बढेगी,
झूठ एक संताप है बच्चो।	झूठ कहो तो मान घटेगी।
एक झूठ सौ झूठ बुलवाता,	सत्य सदा ही रहता आगे,
झूठ कभी न कभी पकड़ा जाता।	झूठ सदा ही पीछे भागे॥
तिरस्कार झूठे का होता	राम सत्य में रहे सदा ही,
झूठा सम्मान और आदर खोता।	झूठ राम को चुभे सदा ही।
झूठ की आदत कभी न डालो,	सत्य मिलेगा महावीर की वाणी में,
सीधी स्पष्ट सच सदा कह डालो,	झूठ मिलेगा अपयश की कहानी में॥
सच्चे का होता बोलबाला,	सत्य सदा जो रहेगा मन में,
झूठ का मुँह होता काला॥	झूठ कहेगा चलता वन में॥
● ओमप्रकाश बजाज	**● सुरेन्द्र 'भारती'**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतपञ्चमी : हमारे कर्त्तव्य

पं. सुनील जैन 'संचय' शास्त्री

कल्पना करें कि शास्त्र या आगम ग्रन्थ यदि न लिखे गए होते तो क्या होता ? हम कहाँ होते ? हम सब अज्ञान के अंधकार में भटक रहे होते, हमें लौकिक सुख-सुविधाएँ प्राप्त तो होतीं, परन्तु ज्ञानसुधारस के स्वाद से वंचित ही रहना पड़ता। ज्ञान के अभाव में सभ्य जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती। ज्ञान के अभाव का परिणाम होता कि लोगों को धर्म-ज्ञान प्राप्त न होता। ऐसे में लोग अपने जीवन को भोगों में गँवाकर संसार के अनंत चक्र में भटकते रहते। इस अज्ञान अंधकार को मिटाने का अभूतपूर्व व ऐतिहासिक दिन है श्रुतपंचमी। माँ भारती के उत्थान तथा ज्ञानाराधना का यह महापर्व श्रुतपंचमी जैन परम्परा में महावीर जंयती पर्व की तरह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण तथा सांस्कृतिक पावन पर्व है। यह पर्व प्रत्येक वर्ष ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को बड़े आदर एवं सम्मान के साथ मनाया जाता है। इस पर्व के लिए धरसेन स्वामी, जिनके मन में तीर्थंकर कथित तत्त्वज्ञान को लिपिबद्ध कराने का प्रशस्त विचार उत्पन्न हुआ और अद्‌भुत प्रज्ञा सम्पन्न पुष्पदन्त और भूतबलि सरीखे उनके युगल शिष्य, जिन्होंने ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के दिन शास्त्र रचना या श्रुतावतार का प्रथम महान कार्य पूर्ण किया था, उनको युगों-युगों तक याद किया जाता रहेगा।

श्रुतपंचमी के दिन हमें सतत शास्त्राभ्यास या स्वाध्याय की प्रेरणा प्राप्त करनी चाहिए। वस्तुत: यह श्रुतपंचमी पर्व शास्त्र-भण्डारों के प्रारंभ किये जाने का पर्व है। उन महान आचार्य-भगवन्तों ने कठिन परिश्रम, लगन, कर्मठता, एकाग्रता से दिन-रात खून-पसीना एक करके शास्त्रों को ताड़पत्र एवं भोजपत्र आदि पर लिखकर उनकी सुरक्षा कर हम तक पहुँचाया, परन्तु हम कितने अभागे और आलसी हैं कि उस दिव्य सम्पदा से लाभान्वित होने का भाव ही हमारे मन में नहीं आता। आज मुद्रण-कला की भरमार होने पर भी हमारी प्राचीन दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ नष्ट होने की कगार पर है। कई प्राचीन पाण्डुलिपियाँ दीमक या चूहों का भोजन बनकर नष्ट हो गयी हैं। पाण्डुलिपियाँ हमारी जैन परम्परा, संस्कृति, इतिहास, आचार-विचार की अमूल्य धरोहर हैं। यदि हमने विरासत में मिली हुई पाण्डुलिपियों की सुरक्षा हेतु प्रबंध नहीं किया तो इतिहास हमें क्षमा नहीं कर पाएगा। आज हम गन्धहस्तिमहाभाष्य, विद्यानंद महोदय, वादन्याय आदि शताधिक ग्रंथों को लुप्त घोषित कर चुके हैं। आखिर इसमें प्रमाद तो हमारा ही रहा न ? पाण्डुलिपियों के संरक्षण-संवर्द्धन में जिनवाणी को समर्पित आदरणीय भैया संदीप जी "सरल" ने अनेकान्त ज्ञान मंदिर, बीना की स्थापना कर एक अभिनंदनीय व स्तुत्य कार्य किया है। हमारा दायित्व बनता है कि श्रुतपंचमी के इस पावन पर्व पर हम भी उनके साथ हों।

आज हमारे समाज में गजरथों, पंचकल्याणकों, विधानों के बहु-खर्चीले कार्यक्रम प्रचुर मात्रा में हो रहे हैं परन्तु शास्त्र सुरक्षा की तरफ किसी का भी ध्यान नहीं है। मैं अपने इस लघु लेख के माध्यम से श्रुतपंचमी के अवसर पर आचार्य भगवन्तों, मुनिराजों, आर्यिकाओं, प्रतिष्ठाचार्यों, विद्वानों, श्रेष्ठियों, दानवीरों से अनुरोध करना चाहता हूँ कि एक पंचकल्याणक में होने वाली व्यय-राशि को यदि शास्त्र सुरक्षा में लगा दें, तो सैकड़ों पंचकल्याणक कराने का पुण्य फल उन्हें प्राप्त होगा। हम सभी इस आगम वाक्य से परिचित हैं कि "शास्त्र के एक पेज (पृष्ठ) का जीर्णोद्धार करवा देने से एक मंदिर के निर्माण बराबर पुण्य की प्राप्ति होती है"। हमारा समाज प्रांतीय, राष्ट्रीय स्तर पर पाण्डुलिपि संग्रहालय केन्द्रों की स्थापना करे और उस संग्रहालय में पाण्डुलिपियों की लेमीनेशन अथवा माइक्रोफिल्म बनाकर पूर्ण सुरक्षा की जावे। केन्द्रों की स्थापना का मंगलाचरण श्रुतपंचमी के पावन पर्व से कर सकते हैं।

वर्तमान युग मुद्रणकला का है। आजकल प्रकाशित साहित्य में शुद्ध, अशुद्ध का विवेक नहीं रखा जाता। आवश्यक सावधानी नहीं रखने से लिखने वाले के भाव सही रूप में पाठक तक नहीं पहुँच पाते। जो लिखा जाता है, वह छप जाता है और जो छप जाता है वह छुपा तो नहीं रहता, मगर विकृत होकर सामने आ जाए तो लिखने वाले का उद्देश्य सफल नहीं होता और पढ़ने वाला ठीक से समझ नहीं पाता, अन्यथा समझ लेता है।

आज हमारे समाज में स्वाध्याय की गौरवशाली परम्परा का दिनों-दिन ह्रास हो रहा है, जिनालय सूने हो रहे हैं। यही कारण है कि आज की युवा पीढ़ी धर्म ग्रंथों को पढ़ना पसन्द नहीं कर रही है, धर्म-कर्म में वे अरुचि दिखा रहे हैं। स्वाध्याय की गौरवशाली परम्परा को वर्तमान को देखते हुए पुर्नजीवित करना ही होगा।

हमारे कर्त्तव्य

इस दिन जगह-जगह जिनवाणीरथ निकाले जायें। शास्त्रों के वेष्टन बदले जायें तथा अलमारियों की साफ सफाई की जाए। प्रत्येक नगर, ग्राम में पुस्तकालय की स्थापना की जाए। हर मंदिर में साहित्य विक्रय केन्द्र खोले जायें तथा दानी महानुभाव द्वारा लागत या लागत से कम मूल्य पर साहित्य पाठकों को सुलभ कराये जायें। प्राचीन या अनुपलब्ध पुस्तकों का पुन: प्रकाशन किया जाए। मंदिरों में जैन पत्र/पत्रिकाएँ अधिक से अधिक संख्या में मँगायें ताकि सामाजिक रुचि बनी रहे। शास्त्र सुरक्षा अभियान चलाया जावे। जीर्णशीर्ण पड़े ग्रंथों का जीर्णोद्धार कराया जाये। ग्रंथों की सूची बनाकर रखी जाये ताकि सुलभता से ग्रन्थ प्राप्त हो सकें। श्रुतपंचमी के दिन प्रात: पूजनादि के पश्चात् मंदिरों के ग्रंथ भण्डारों, पुस्तकालयों की पुस्तकों को विधिवत् शास्त्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भण्डारों से निकालकर उनकी यथायोग्य मरम्मत कर नयी जिल्द चढ़ानी चाहिये। अलमारियों को साफ करें। पुस्तकों को धूप दिखायें। जहाँ प्रतिदिन स्वाध्याय की परम्परा न हो, वहाँ स्वाध्याय की परम्परा चालू की जाय तथा वहाँ युवा पीढ़ी को बैठने, सुनने, मनन करने की प्रेरणा दी जाए।

आशा है श्रुतपंचमी के ज्ञानाराधन पर्व को उत्साहपूर्वक मनाने की दृढ़ इच्छाशक्ति व संकल्प जाग्रत होगा। निम्न पंक्ति के साथ लेख को विराम देना चाहूँगा

''ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण''।

वी. 3/80, भदैनी
वाराणसी - 221001

चिंतन से श्रेष्ठ विचार प्रकट होते हैं

डॉ. नरेन्द्र जैन 'भारती'

उत्साह मनुष्य की भाग्यशीलता का पैमाना है, यह लोकप्रसिद्ध किंवदन्ती है। उत्साह से कार्य करने वाला सफल होता है, ऐसा देखने और सुनने में आता है। भाग्य और पुरुषार्थ पर लोग भिन्न-भिन्न विचार रखते हैं। कुछ लोगों का विचार है कि भाग्य से ही सब कुछ मिलता है। कुछ लोग इसी कारण भाग्य के सहारे बैठे रहते हैं, जबकि पुरुषार्थ पर आस्था रखने वाले अनवरत लगन एवं निष्ठा से कार्य कर असंभव को भी संभव बना देते हैं। यह कहा जाता है कि 'भाग्यहीन नर पावत नाहीं' अर्थात् भाग्यहीन मनुष्य कुछ भी नहीं पाता है। यह कथन चिंतनीय हैं। चिंतन से श्रेष्ठ विचार प्रकट होते हैं। मनुष्य बुद्धि, बल सम्पन्न है, इसीलिए अन्य (दूसरे) प्राणियों से उसकी अलग पहचान है। व्यक्ति सिर्फ भोजन के लिए घूमे, ऐसी मानव में प्रवृत्ति बहुत कम देखने को मिलती है वरन् पशुओं तथा अन्य जीवों में यही (भोजन की आकांक्षा) प्रवृत्ति पाई जाती है। आहार, निद्रा, मैथुन (काम और भोग) तथा परिग्रह ये चार संज्ञाएँ सामान्य रूप से मनुष्य और पशुओं में समान रूप से पाई जाती है, जबकि जिज्ञासा तथा बुद्धि बल मानव में निरन्तर दिखाई देता है। जिज्ञासा मनुष्य की सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति है। यही जिज्ञासा उसे किसी न किसी कार्य के लिए प्रेरित करती है। अदृश्य तथा दृश्य के प्रति जिज्ञासा के कारण ही व्यक्ति भाग्य की अपेक्षा पुरुषार्थ पर जोर देता है। पुरुषार्थ कार्य करने की शक्ति है, जबकि भाग्य पलायनवाद का प्रतीक है। भाग्यवाद पर विश्वास रखने वाला शंकालु रहता है, जबकि पुरुषार्थी 'आगे बढ़ते रहो', की नीति पर चलता है। पुरुषार्थ से कार्य बनते हैं, जबकि भाग्य से हमें जो व्यवस्था मिलती है उसका तो हम भोग कर सकते हैं, परंतु उसके आगे कुछ भी नहीं है।

ऐसा कहा जाता है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। इस अमूल्य वाक्य को पढ़कर मुझे अत्यंत संतोष होता है। मेरी यह धारणा है कि कर्मवाद में विश्वास रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति इसे अवश्य स्वीकार करेगा। भाग्य का निर्माता कौन है? यदि परमात्मा को संसार के सभी जीवों के लिये एक समान सुखद जीवन की कल्पना करना चाहिए तो फिर संसार के प्राणी दु:खी क्यों हैं? यहाँ प्रश्न उठता है कि परमात्मा ने किसी को दु:खी और किसी को सुखी बनाया है, यदि हाँ, तो फिर प्रश्न उपस्थित होता है कि परमात्मा किसी को सुखी और किसी को दु:खी बनाने के लिये क्या भेदभाव करता है? यदि नहीं, तो फिर आप विचार करें कि व्यक्ति दु:खी क्यों है? इन प्रश्नों पर जीव का चिंतन अनवरत चलता रहा और चलता रहेगा, परन्तु यह निष्कर्ष सभी स्वीकार करते हैं कि व्यक्ति स्वयं अपने कर्मों का कर्त्ता और भोक्ता है। परमात्मा ने सभी जीवों को पुरुषार्थ करने की शक्ति प्रदान की है कोई उसका सदुपयोग करता है, कोई दुरुपयोग करता है। सदुपयोग करने वाला व्यक्ति अच्छे विचार, अच्छी भावनाएँ रखता है इसलिये उसमें अच्छे गुणों का ही समावेश होता है। जिसका परिणाम यह होता है कि वह श्रेष्ठ पूँजी (विचार) से श्रेष्ठ कार्य (पुरुषार्थ) करता है। चिंतन की धारा उसकी निरन्तर चलती है। विवेक जाग्रत अवस्था में रहता है, इसलिये उसकी बुद्धि नष्ट नहीं होती। इसके विपरीत जो बुरी सङ्गति करता है, वह बुरे विचारों को आत्मसात कर निकृष्ट और खोटे (बुरे) कार्य करता है और पतन की ओर उन्मुख हो जाता है। विद्यार्थी जीवन की प्रथम पाठशाला में ही कर्मशील बनने की प्रेरणा व्यक्ति को दी जाती है। समस्त धर्म एवं दर्शन तथा वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत, पद्म चरित सहित जितने भी प्राचीन ग्रन्थ हैं, वे भौतिक जीवन में पारलौकिक सुख की प्राप्ति के लिए किसी न किसी रूप में सम्यक्ज्ञान की प्राप्ति तथा सम्यक्चारित्र के धारण करने पर बल देते हैं। वह सम्यक्चारित्र एक ऐसी प्रक्रिया है जो मोह, क्षोभ से रहित होकर क्षमा, मृदुता आदि के माध्यम से आत्मा को उन्नत बनाने के लिये सदैव पुरुषार्थ करने की प्रेरणा देता है। इसी तरह दैनिक जीवन को सुखी बनाने के लिये भौतिक सुख-सुविधाओं का होना भी आवश्यक है। अत: जो व्यक्ति किसी न किसी कार्य में संलग्न रहता है वही सफलता पाता है। सफलता प्राप्ति के लिये आवश्यक है कि हम जो भी कार्य करें, उत्साह और उमंग से करें। यही भाग्यशीलता का पैमाना है।

म.दि.जैन हा. से.स्कूल,
सनावद (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

जिज्ञासा -जातिस्मरण कितने भव तक का हो सकता है ?

समाधान -श्री आदिपुराण (ज्ञानपीठ प्रकाशन) भाग-1, पृष्ठ-452 पर इस प्रकार कहा है :- भगवान् का रूप देखकर श्रेयांसकुमार को जातिस्मरण हो गया, जिससे उसने अपने पूर्व पर्याय संबंधी संस्कारों से भगवान् के लिए आहार देने की बुद्धि की ॥ 78 ॥ उसे श्रीमती और बज्रजंघ आदि का वह समस्त वृत्तांत याद हो गया तथा उसी भव में उन्होंने जो चारण ऋद्धिधारी दो मुनियों के लिए आहार दिया था, उसका भी उसे स्मरण हो गया ॥79 ॥ भावार्थ-राजा श्रेयांस को अपने पूर्वभव श्रीमती की पर्याय तक का जातिस्मरण हुआ था। राजा श्रेयांस के पूर्वभव इस प्रकार रहे 1. अहमिन्द्र 2. धनदत्त 3. प्रतीन्द्र 4. केशव 5. स्वयंप्रभ देव 6. भोगभूमि में आर्या 7. श्रीमती। अर्थात् राजा श्रेयांस को पिछले 7 भवों का जातिस्मरण हुआ।

2. श्री जसहरचरिउ (ज्ञानपीठ प्रकाशन) पृष्ठ-123 पर इस प्रकार कहा है- अभयरुचि कुमार और अभयमति पुत्री को इस प्रकार जातिस्मरण हुआ। हम ही वे राजा के पूर्वज रानी चन्द्रमति और राजा यशोधर हैं, हम ही वे थलचर, वे मयूर और श्वान हुए थे, हम ही नकुल और सर्प हुए थे, हम ही शिप्रा नदी के जलचर मत्स्य और सुंसुमार हुए, हम दोनों ही फिर अज हुए व तत्पश्चात् अज और महिष हुए, हम ही कुक्कुट पक्षी हुए और तत्पश्चात् अभयरुचि और अभयमति हुए हैं। भावार्थ-इस प्रमाण के अनुसार भी अभयरुचि और अभयमति को पिछले 7 भवों का जातिस्मरण हुआ था।

3. श्री वीरवर्धमान चरितम् (श्री सकलकीर्ति विरचित-ज्ञानपीठ प्रकाशन) पृष्ठ-213 पर इस प्रकार कहा है: इसी राजगृह नगर में भवस्थिति के वश से पूर्वभव में मनुष्य आयु को बाँधकर नीचगोत्र के उदय से अत्यंत नीचकुल में उत्पन्न हुआ-

कालसौकरिक नाम का कसाई रहता है। अब उसे सातभव संबंधी जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न हुआ है- .....। भावार्थ-इस प्रमाण के अनुसार भी उस कसाई को सात भव संबंधी जातिस्मरण हुआ था।

उपर्युक्त तीन प्रमाणों के अनुसार, आगम में, सात भव तक के जातिस्मरण के प्रसंग प्राप्त होते हैं। यद्यपि किसी भी शास्त्र में या किसी भी आचार्य आदि के द्वारा प्रवचन आदि में यह पढ़ने-सुनने को नहीं मिला कि जातिस्मरण अधिक से अधिक कितने भवों का हो सकता है, परन्तु उपर्युक्त प्रमाण सात भव तक के जातिस्मरण होने का वर्णन करते हैं। यदि इससे अधिक भवों का कोई प्रमाण मिले तो स्वाध्यायप्रेमी सज्जन तुरंत सूचित करने का कष्ट करें।

जिज्ञासा- कुभोग भूमि में तिर्यंच पाये जाते हैं अथवा नहीं ?

समाधान - श्री तिलोयपण्णत्ति अधिकार-4 गाथा-2552 में कुमानुषि-कुमानुषों का वर्णन इस प्रकार किया है-

गब्भादो ते मणुवा, जुगलं जुगला सुहेण णिस्सरिया।
तिरिया समुच्चिदेहिं, दिणेहि धारंति तारुण्णा ॥2552 ॥

अर्थ- वे मनुष्य और तिर्यंच युगल-युगल रूप में गर्भ से सुखपूर्वक निकलकर अर्थात् जन्म लेकर समुचित दिनों में यौवन धारण करते हैं।

वे धणु-सहस्स तुंगा, मंदकसाया पियंगु-सामलया।
सव्वे ते पल्लाउ, कुभोग-भूमीए चेट्ठंति ॥2553 ॥

अर्थ-वे सब कुमानुष दो हजार (2000) धनुष ऊँचे होते हैं, मन्दकषायी, प्रियंगु सदृश श्यामल और एक पल्य प्रमाण आयु से युक्त होकर कुभोगभूमि में स्थित रहते हैं।

2. जैन तत्त्वविद्या (पूज्यमुनि श्री प्रमाणसागर जी द्वारा रचित-ज्ञानपीठ प्रकाशन)पृष्ठ 86-87 में इस प्रकार कहा है- कुभोगभूमि में सभी मनुष्य और तिर्यंच युगलरूप में जन्म लेते हैं, और युगल ही मरते हैं .....। इनमें से सम्यग्दर्शन प्राप्त कर लेने वाले मनुष्य-तिर्यंच सौधर्म, ईशान स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि कुभोगभूमि में तिर्यंच भी पाये जाते हैं, परन्तु विचारणीय विषय यह भी है कि जीवकाण्ड में जीवसमास के भेद वर्णन प्रसंग में मनुष्यों के भेदों में, कुभोगभूमि के मनुष्यों का वर्णन तो किया है, परन्तु तिर्यंचों के वर्णन में कुभोगभूमि में उत्पन्न तिर्यंचों का वर्णन क्यों नहीं किया।

जिज्ञासा- षष्ठभक्त उपवास का अर्थ दो दिन का उपवास किया है, ऐसा क्यों ?

समाधान -नियमानुसार दिन में दो बार भोजन का विधान है, किन्तु उपवास धारण करने के दिन दूसरी बार का भोजन त्याग दिया जाता है और आगे दो दिन के चार भोजन भी त्याग दिये जाते हैं। इसप्रकार चूँकि दो उपवासों में पाँच भोजनबेलाओं को छोड़कर छठी बेला पर भोजन ग्रहण किया जाता है, अतएव षष्ठभक्त का अर्थ दो उपवास करना उचित ही है। उदाहरणार्थ यदि अष्टमी व नवमी का उपवास करना है तो सप्तमी की एक, अष्टमी की दो और नवमी की दो इस प्रकार पाँच भोजनबेलाओं को छोड़कर दशमी के दोपहर को छठी बेला पर पारणा की जायेगी।

जिज्ञासा- योग परिवर्तन और व्याघात-परिवर्तन में क्या अन्तर है ?

समाधान -विवक्षित योग का अन्य किसी व्याघात के बिना काल-क्षय हो जाने पर अन्य योग के परिणमन को योग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन कहते हैं, किन्तु विवक्षित योग का कालक्षय होने के पूर्व ही क्रोधादि निमित्त से योग-परिवर्तन को व्याघात कहते हैं। जैसे- कोई एक जीव मनोयोग के साथ विद्यमान है। जब अन्तर्मुहूर्त प्रमाण मनोयोग का काल पूरा हो गया, तब वह वचनयोगी या काययोगी हो गया। यह योग-परिवर्तन है। इसी जीव के मनोयोग का काल पूरा होने के पूर्व ही कषाय, उपद्रव, उपसर्ग आदि के निमित्त से मन चंचल हो उठा और वह वचनयोगी या काययोगी हो गया, तो यह योग का परिवर्तन व्याघात की अपेक्षा से हुआ। योगपरिवर्तन में काल प्रधान है, जबकि व्याघात-परिवर्तन में कषाय आदि का आघात प्रधान है। यही दोनों में अंतर है।

जिज्ञासा - दही एवं शक्कर मिलाकर खाना क्या अभक्ष्य है?

समाधान - किन्ही भी आचारप्रणीत ग्रन्थों में भक्ष्य-अभक्ष्य, सूतक-पातक आदि के बारे में विस्तृत कथन देखने में नहीं आता। ये प्रसंग विद्वानों द्वारा लिखित श्रावकाचारों या क्रियाकोषों में ही देखने को मिलते हैं। अत: इन्हीं के आधार पर इस विषय पर चर्चा की जा सकती है। श्री किशनसिंह विरचित क्रियाकोष (अगास प्रकाशन) पृष्ठ-18 में इस प्रकार कहा है-

कपड़े बांध दही को धरै, मीठो मेल शिखरिणी करै।113
खारिख दाख घोल दधिमांहि, मीठो भेल रायता खांहि।
मीठो जब दधिमांहि मिलाहिं, अन्तरमुहूर्त त्रस उपजांहि॥114
यामैं मीठा जुत जो दही, अन्तरमुहूर्त मांहे सही।
खावो भविजनको हितदाय, पीछै सन्मूर्च्छन उपजाय॥ 115

उक्तं च गाथा

इक्खु दही संजुत्तं भवन्ति समुच्छिमा जीवा।
अन्तोमुहूर्त मज्झे तम्हां भणंति जिणणाहो॥-116

अर्थ - कितने ही लोग कपड़े में दही को बाँध कर रखते हैं, पश्चात् मीठा मिलाकर शिखरिणी बनाते हैं। इसके सिवाय कितने ही लोग खारक और दाख के घोल को दही में मिलाकर तथा मीठा डालकर रायता खाते हैं सो दही में मीठा मिलाने पर अन्तर्मुहुर्त में त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं। मीठा सहित दही अन्तर्मुहूर्त तक तो ठीक रहता है, भव्य जीव उसे खा सकते हैं। परन्तु पश्चात् उसमें संमूर्च्छन जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जैसा कि गाथा में कहा गया है- मीठा और दही मिलाने पर अन्तर्मुहूर्त में संमूर्च्छन जीव उत्पन्न हो जाते हैं ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है। -113-116

(2) श्री रत्नकरण्ड श्रावकाचार (पं. सदासुखदास जी की टीका-जैन साहित्य सदन, दिल्ली प्रकाशन, पृष्ठ 136) में इस प्रकार लिखा है **"दही में खांड-बूरा मिलाय बहुत कालपर्यन्त मत राखो, दोय मुहूर्त तांई खाना योग्य है"** अर्थात् दही में शक्कर मिलाकर केवल दो मुहूर्त अर्थात् लगभग डेढ़ घण्टा तक खाया जा सकता है। इसके बाद अभक्ष्य हो जाता है।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि दही में मीठा मिलाकर यदि खाने का अवसर पड़े तो तुरन्त ही मिलाकर खा लेना चाहिए। अन्यथा उसमें त्रस जीवों की उत्पत्ति होने से वह अभक्ष्य है। बहुत से साधर्मी भाई अपने घर में श्रीखण्ड बनाकर खाते हैं जो उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार अभक्ष्य की कोटि में आता है।

जिज्ञासा - वेल फल भक्ष्य है या अभक्ष्य।

समाधान - इसके सम्बन्ध में निम्न प्रमाण द्रष्टव्य है। (1) उमास्वामी श्रावकाचार श्लोक नं. 313 में इस प्रकार कहा है-

शिम्बमो मूलकं विल्वफलानि कुसुमानि च।
नालीसूरणकन्दश्च त्यक्तव्यं शृंगबेरकम् ॥313॥

अर्थात् सेम, मूली, विल्वफल अर्थात् वेल, पुष्प, नाली, सूरण, जमीकन्द और अदरक का भी त्याग करना चाहिये।

(2) श्री पूज्यपाद श्रावकाचार श्लोक नं. 36 में इस प्रकार कहा है

शृंगवेरं तथानन्तकाया विल्वफलं सदा।
पुष्पं शाकं च सन्धानं नवनीतं च वर्जयेत् ॥ 136॥

अर्थात् शृंगवेर अर्थात् अदरक तथा कन्दमूल आदि सभी अनन्तकाय वनस्पति, वेलफल, पुष्प, शाक, सन्धानक (अचार, मुरब्बा) और नवनीत इनका सदा त्याग करें।

(3) श्री किशन सिंह विरचित क्रियाकोष (अगास प्रकाशन) पृष्ठ-26 पर इस प्रकार कहा गया है-

कालिंगडा घिया तोरइ, कदू बेल रू जामा मिई।
इत्यादिक फल काय अनन्त, तिनको तजिये तुरत महंत ॥17॥।

अर्थ - कलींदा (तरबूज), लौकी, तोरई, कद्दू, बेल, जामुन, निवोरी आदिक फल अनन्तकाय कहे गये हैं। इसलिये उत्तम जनों को इनका शीघ्र ही त्याग करना चाहिए।

उपर्युक्त ग्रन्थ, उमास्वामी श्रावकाचार तथा पूज्यपाद श्रावकाचार, यद्यपि उन आचार्य उमास्वामी एवं आचार्य पूज्यपाद द्वारा रचित नहीं हैं, जो तत्त्वार्थसूत्र एवं सर्वार्थसिद्धि टीका के रचयिता हैं। परन्तु फिर भी सोलापुर से प्रकाशित श्रावकाचार संग्रह में इनका संकलन होने से उपर्युक्त प्रमाण दिये गये हैं।

वर्तमान में बहुत से त्यागीजन वेल के रस का सेवन करते हुये देखे जाते हैं। उनसे निवेदन है कि वे कृपया उपर्युक्त प्रमाणों पर विचार करें।

(4) श्री सिद्धांतसार रचयिता, आ. नरेन्द्रसेन, (सोलापुर प्रकाशन) पृष्ठ -248 में बेल फल खाने पर प्रायश्चित्त का विधान किया है। यथा-

बीजपूरकबिल्वादिग्रहणेन तु शुद्धयति।
एक कल्याणकेनैव यदिकारणमाश्रित: ॥57॥

अर्थ - किसी कारण से बीजपूर-बिजौरा, बेलफल आदि का ग्रहण यदि मुनि करे, तो वह एक कल्याण से ही शुद्ध होता है ॥57॥

1/205, प्रोफसर्स कॉलोनी
आगरा (उ.प्र.)-282002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बारह भावना

श्री मंगतराय जी

वंदूं श्री अरहंत पद वीतराग विज्ञान।
वरणूं बारह भावना जग जीवन हित जान ॥1॥

अर्थ - वीतराग विज्ञान स्वरूप श्री अरहंत भगवान की वंदना करके संसार के जीवों के कल्याण को जानकर बारह भावना का वर्णन करता हूँ।

कहाँ गये चक्री जिन जीता भरत खंड सारा।
कहाँ गये वह राम रू लक्ष्मण जिन रावण मारा॥
कहाँ कृष्ण रुक्मणि सतभामा अरु सम्पति सगरी।
कहाँ गये वह रंगमहल अरु सुवरन की नगरी॥2॥

शब्दार्थ - भरत खंड-5 म्लेच्छ खंड,1 आर्य खंड, सगरी-पूरी।

अर्थ - जिन्होंने पूरे भरत खंड में विजय प्राप्त की, ऐसे चक्रवर्ती की क्या गति हुई? जिन्होंने रावण को मारा, उन लक्ष्मण व राम की क्या गति हुई? श्री कृष्ण, रुक्मणि और सत्यभामा एवं उनकी सम्पत्ति का क्या हुआ? कृष्ण जी का रंगमहल (द्वारिका) एवं रावण की स्वर्ण की लंका का क्या हुआ?

नहीं रहे वह लोभी कौरव जूझ मरे रन में।
गये राज तज पांडव वन को अगिन लगी तन में॥
मोह नींद से उठ रे चेतन तुझे जगावन को।
हो दयाल उपदेश करैं गुरु बारह भावन को॥3॥

शब्दार्थ - जूझ-झगड़ा करके, रन-युद्ध, तज-त्याग करके।

अर्थ - लालची कौरव भी नहीं रहे, वे भी झगड़ा करके युद्ध में मरण को प्राप्त हुये। राज्य का त्याग करके पांडवों ने दीक्षा ले ली, उनके भी शरीर में कौरवों ने अग्नि लगा दी व गर्म लोहे के आभूषण पहना दिये। हे चेतन! तू मोह रूपी निद्रा से उठ जा, तुझे जगाने के लिए दयालुगुरु बारह भावना का उपदेश दे रहे हैं।

अनित्य भावना

सूरज चाँद छिपै निकलै ऋतु फिर-फिर कर आवै।
प्यारी आयु ऐसी बीतै पता नहीं पावै॥
पर्वत पतित नदी सरिता जल बहकर नहिं हटता।
स्वाँस चलत यों घटै काठ ज्यों आरे सों कटता॥4॥

अर्थ - सूरज और चन्द्रमा छिपते हैं और निकलते हैं, ऋतुएँ आती हैं और जाती हैं। हमारी प्यारी आयु भी ऐसे ही बीत रही है कि हमें पता भी नहीं चलता है। पर्वत से गिरता हुआ और नदियों में बहता हुआ पानी कभी रुकता नहीं है। जैसे चलते हुए आरे से लकड़ी कटती जाती है, वैसे ही स्वाँस चलते-चलते जीवन घटता जाता है।

ओस बूँद ज्यों गलै धूप में बा अंजुलि पानी।
छिन-छिन यौवन छीन होत है क्या समझै प्रानी॥
इंद्रजाल आकाश नगर सम जगसंपति सारी।
अथिर रूप संसार विचारो सब नर अरु नारी॥5॥

अर्थ - जिस प्रकार धूप के आने पर ओस की बूँद गल जाती है अथवा अंजुलि में लिया हुआ पानी धीरे-धीरे गिर जाता है, उसी प्रकार यह जो यौवन अवस्था है यह भी क्षण-क्षण में नष्ट हो रही है। हे प्राणी! इस बात को तू समझ! इन्द्र के मायाजाल और आकाश में बनाये गये काल्पनिक नगर के समान संसार की सारी सम्पत्तियाँ अथिर रूप हैं। तुम संसार को इसी तरह नाशवान जानो।

भावार्थ - यहाँ पर तीन संयोगों की बात की है, जिनका वियोग अवश्यंभावी है।

1. प्राप्त हुई आयु धीरे-धीरे समाप्त हो रही है।
2. यौवन अवस्था प्राप्त हुई है, वह बुढ़ापे को देकर जाती है।
3. चेतन-अचेतन आदि प्राप्त हुई सभी वस्तुएँ नश्वर हैं।

अशरण भावना

काल सिंह ने मृग चेतन को घेरा भव वन में।
नहीं बचावन हारा कोई यों समझो मन में॥
मंत्र-यंत्र सेना धन संपति राज पाट छूटै।
वश नहीं चलता काल लुटेरा काय नगरि लूटै॥6॥

अर्थ - काल (यमराज) रूपी शेर ने हरिण रूपी आत्मा को संसार रूपी वन में घेरा हुआ है! इस आत्मा को यमराज रूपी काल से कोई बचा नहीं सकता है, ऐसा अपने मन में विचार करो। जब यमराज रूपी काल, शरीर रूपी नगर को लूटकर ले जाता है, उस समय मंत्र-तंत्र, सेना, धन-सम्पत्ति, राजपाट सब यही छूट जाता है। इनमें से कोई भी बचाने में समर्थ नहीं है।

चक्ररत्न हलधर सा भाई काम नहीं आया।
एक तीर के लगत कृष्ण की विनश गई काया॥
देव धर्म गुरु शरण जगत में और नहीं कोई।
भ्रम से फिरै भटकता चेतन यूँ ही उमर खोई॥7॥

अर्थ - जिस समय जरत कुमार का तीर धोखे से कृष्ण जी को लग गया था, उस समय अर्द्धचक्री (कृष्ण) का चक्ररत्न एवं बलदेव (बलभद्र) जैसा भाई उनके काम नहीं आया। कृष्ण जी की काया नष्ट हो गयी। इस संसार में देव, धर्म और गुरु ही शरण हैं और कोई शरण देने वाला नहीं है। अन्य पदार्थों को शरण मानता हुआ यह संसारी प्राणी भ्रम से भटकता हुआ अपनी उम्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को व्यर्थ ही समाप्त कर रहा है।

भावार्थ - जब शलाका पुरुषों को कोई शरणदायी नहीं है, तो हमारी क्या बात है! हमें चाहिये कि सच्चे देव शास्त्र गुरु का सहारा लें, जिससे संसारसमुद्र से तिर सकें।

संसार भावना

जनम मरन अरु जरा रोग से सदा दुखी रहता।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव परिवर्तन सहता॥
छेदन भेदन नरक पशु गति बध बँधन सहना।
रागउदय से दुख सुरगति में कहाँ सुखी रहना॥8॥

अर्थ - जन्म, जरा और बुढ़ापा रूपी रोग से यह जीव हमेशा दुखी रहता है एवं द्रव्यपरावर्तन क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन एवं भव परावर्तन में भी दुखों को ही सहन करता है। नरकों में छेदा जाना, भेदा जाना, तिर्यंचों में बध बंधन आदिक तथा देवगति में राग के उदय में दुख ही प्राप्त किये हैं, कहीं भी सुख प्राप्त नहीं किया।

भोगि पुण्यफल हो इकइंद्री क्या इसमें लाली।
कुतवाली दिनचार वही फिर खुरपा अरु जाली॥
मानुष जनम अनेक विपतिमय कहीं न सुख देखा।
पंचम गति सुख मिलै शुभाशुभ को मेटो लेखा॥9॥

अर्थ - देवगति का देव पुण्य के फल को भोगकर यदि एकेन्द्रिय में पैदा हो जावे तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। जैसे कुछ समय तक सुख साता में राज्य कर लिया, फिर वही खेती-किसानी में खुरपा और जाली हाथ में आ गयी। मनुष्य जनम भी अनेक विपत्तिमय है। इसमें कहीं भी सुख देखने में नहीं आता। सभी दुःखी दिखाई देते हैं। इसलिए शुभ और अशुभ दोनों क्रियाओं का त्याग कर पंचमगति को प्राप्त हो, तभी सच्चा सुख प्राप्त होगा।

भावार्थ - पंचपरावर्तनरूप संसार में चारों गतियों में भटकता हुआ यह प्राणी जन्म, जरा एवं मृत्युरूपी रोगों से दुखी है। संसार में कहीं भी सुख नहीं है।

अर्थकर्त्ता : ब्र. महेश जैन
श्रमण संस्कृति संस्थान
सांगानेर (जयपुर)

कविता

जीवन-धन

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

धन की चाह
वह भी अकूत,
बिना परिश्रम के
आज के भौतिकवादी
मनुष्य की पहचान है।
वह चाहता है
धनाभाव को पाटना
कर्ज से, छल से, हिंसा से, झूठ से
न कि फर्ज़ से
यहाँ तक कि
चोरी से भी परहेज नहीं है उसे
चाहे वह 'कर' की हो
या कर से हो।
धनासक्ति में वह
रूप परिवर्तन करता है
देह को सजाता है
निर्मम बनता है-
अपनों के प्रति, अपने प्रति
पुण्य को कोसता है
पाप को करता है
मतान्ध/मदान्ध भी हो जाता है
करुणा रसहीन हो जाती है उसकी
छलता है दूसरों को
यह भूलकर
कि छला जा रहा है स्वयं
जुए में दाँव पर दाँव लगाते
पाण्डवों की तरह
उसे चाहिए हैं सद्गुरु
जो बता सकें उसे
कि रोक चाह धन की
तेरे पास भी तो है-धन
जीवन-धन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दमा का उपचार

डॉ. रेखा जैन

लक्षण

1. यह एक एलर्जिक रोग है और मुख्यत: इसके दौरे प्रात: एवं सायं 2 बजे के मध्य पड़ते हैं, लेकिन रोग पुराना होने पर किसी भी समय पड़ जाते हैं।

2. इस रोग में श्वास नलिकाएँ सिकुड़ जाती हैं जिससे पर्याप्त मात्रा में वायु फेफड़ों को नहीं मिल पाती, इसलिए साँस खिंचकर आता है।

3. दमा दो प्रकार का होता है-

1. फेफड़ो से संबंधित दमा (BRONCHIAL ASTHMA)

2. हृदय से संबंधित दमा (CARDIAC ASTHMA)

1. **BRONCHIAL ASTHMA**

इसके अंतर्गत श्वास नलिकाएँ सिकुड़ जाती है, जिससे साँस लेने में कठिनाई होती है।

2. **CARDIAC ASTHMA**

इसके अंतर्गत हृदय में दुर्बलता आती है। जिसके कारण हृदय पर्याप्त मात्रा में रक्त परिसंचरण नहीं कर पाता और अंतत: आक्सीजन कम मात्रा में मिलती है।

4. दमा में रोगी का चेहरा साँस खिंचने के कारण लाल हो जाता है।

5. जब यह रोग अत्यधिक पुराना हो जाता है तो रोगी को घुटने पेट से लगाकर आगे झुककर साँस लेने में अच्छा लगता है।

6. फेफड़ों में सूजन आ जाती है।

7. स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक होता है।

8. दौरे आने से पूर्व सूचना देने वाले लक्षण- नाक बहना, सिर में भारीपन, घबराहट, बैचेनी, नाक खुजलाना, नाक या गले की अन्त:त्वचा की उत्तेजना, खराश एवं सूजन, शरीर में भारीपन, रीढ़, पीठ तथा कमर में दर्द।

कारण

1. डॉ. के. लक्ष्मण शर्मा के अनुसार दमा एक ऐसा एलर्जिक रोग है जो शरीर में किसी भी पदार्थ के मुँह अथवा नाक द्वारा जाने पर या संपर्क में आने पर उससे उत्पन्न एलर्जी के कारण होता है।

2. आधुनिक विज्ञान को मानने वाले **ALLOPATHIC DOCTOR** मानते हैं कि दमा, शरीर के अन्दर स्थित **HISTAMIN** रसायन के उग्र रूप धारण करने पर होता है।

3. प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार दमा की रोगप्रतिरोधक क्षमता के कम होने पर श्वास-नलिकाओं अथवा हृदय के प्रभावित होने पर होता है।

4. लंबे समय तक सर्दी-खाँसी, श्वास नली या गले की सूजन, ब्रोन्काइटिस आदि रोगों के पश्चात् प्राय: दमा का रोग होने की संभावना होती है।

दमा की प्राकृतिक चिकित्सा

1. शरीर की शुद्धि के लिए एक सप्ताह का उपवास तथा नींबू, गुड़, पानी पर रखते हैं।

2. हल्के गर्म पानी का एनिमा देते हैं।

3. सप्ताह में दो दिन या आवश्कतानुसार कुँजल कराने से एवं गर्म पानी में नमक डालकर गरारे करने से आमाशय एवं गला साफ हो जाता है तथा उसके साथ नाक, गले तथा फेफड़ों का कफ भी बाहर आ जाता है।

4. पेट और पेडू पर गर्म-ठंडा सेंक देकर मिट्टी की ठंडी पट्टी रखते हैं।

5. छाती पर ठंडी पट्टी बाँधकर एवं सिर पर ठंडे पानी का तौलिया रखकर गर्म पाद एवं हस्त स्नान कराने से लाभ होता है।

6. पूरे शरीर की तिल या सरसों के तेल से मालिश करके प्रात: काल 20-30 मिनट का सूर्य स्नान करने से जीवनशक्ति बढ़ती है।

7. इलाज के दिनों में रोज ठंडा कटि स्नान लेने से आँत शुद्ध होती है। इसके बाद दोनों समय टहलने जाएँ।

8. तिल के तेल से छाती की मालिश करने के बाद गर्म-ठंडा सेंक देने से अत्यधिक आराम मिलता है। इसके अतिरिक्त छाती पर वाष्प देने के बाद ठंडा पैक देकर ऊपर से गर्म कपड़े से लपेट देते हैं।

9. यदि रोगी अत्यधिक कमजोर नहीं है तो रोगी को वाष्पस्नान (STEAM BATH) देते हैं।

10. रात्रि को सोने से पूर्व एवं प्रात: 10-15 मिनट भाप में साँस लेना तथा छोड़ना चाहिए। इसके लिए (FACIAL-STEAM) लेते हैं।

यौगिक क्रियाएँ एवं प्राणायाम

1. अनुलोम-विलोम प्राणायाम तथा लंबी गहरी साँस लेने से फेंफड़े मजबूत होते हैं तथा मन शांत रहता है।

2. नेति - सर्वप्रथम जल नेति, फिर रबर नेति तथा जब ये दोनों क्रियाएँ ठीक होने लगे तो धोती नेती करानी चाहिए।

3. आसन - पवन मुक्तासन, सर्वांगासन, भुजगांसन, धनुरासन, जानुशिरासन, योग मुद्रा, आकर्ण- धनुरासन, ताड़ासन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(पीठ के बल साँस छोड़कर तथा पेट के बल साँस भरकर) शशांकासन, गोमुखासन, पश्चिमोत्तासन, कोणासन, मत्स्यासन व शवासन।

भोजन तालिका

1. सर्वप्रथम एक सप्ताह नीबू-गुड़ पानी पर उपवास कराते हैं।

2. दूसरे सप्ताह फलों के रस पर रखते हैं साथ ही दिन में दो बार फल व सलाद देते हैं।

इसके बाद - 5/6 बजे प्रात:-नीबू +गुड़+गर्मपानी 9:30 बजे, मौसमानुसार फलों/सब्जियों का रस।

11.30 बजे - सलाद+उबली सब्जियाँ + चोकर सहित आटे की चपाती + अंकुरित अन्न।

2.00 बजे - रसदार फल या फलों का रस एक गिलास।

4.30 बजे - एक गिलास हरी सब्जियों व पालक आदि का सूप, जिसमें सोंठ व तुलसी के पत्ते भी हों।

6.00 बजे- सलाद+चपाती+उबली सब्जी+अंकुरित अन्न (मोटापे से ग्रस्त रोगी हो तो केवल उबली सब्जी)।

9.00 बजे- एक गिलास गर्म पानी लें।

परहेज

1. दमे के रोगी को चाय, कॉफी, मदिरा-पान, बीडी, तम्बाकू, गर्म मसाले, तला-भुना भोजन, अण्डा, मांस, मछली, मिर्च एवं दही से बचना चाहिए।

2. मानसिक उद्वेग तथा चिन्ता से मुक्त रहना चाहिए।

3. धूल, धुँआ, दुर्गन्ध तथा गंदगी से दूर रहें।

4. मौसम परिवर्तन के समय सावधान रहें तथा शरीर की मौसमानुसार रक्षा करें।

5. शारीरिक श्रम या दौड़-भाग में अतिरेक न करें।

6. बहुत गर्म या बहुत ठंडा न खाएँ।

7. स्नान भी बहुत ठंडे या बहुत गर्म पानी से न करें। शरीर के समान ताप का हल्का गर्म पानी ठीक होता है।

भाग्योदय तीर्थ प्राकृतिक चिकित्सालय
सागर

हाशिये की उम्र पीकर

अशोक शर्मा

एक कविता या कहानी
क्या लिखे बोलो जवानी ?
त्रासदी इन पुस्तकों में
आ गई कितनी भयानक
हाशिये की उम्र पीकर
जी रहे सारे कथानक
प्रस्तावना पहले चरण में
हो गई इतनी सयानी।
कौन जाने और कितनी
कौन टूटेगी व्यवस्था
हास्य से ज्यादा नहीं है
आज नायक की अवस्था
विदूषकों की चरित गाथा
हो गई इतनी लुभानी
आज चारों ओर सबके
है घिरा केवल अँधेरा
बीन पर नागिन नचाता
हर कोई लगता सपेरा
जोड़ बाकी की कथाएँ
याद हैं सबको जुबानी

अभ्युदय निवास
36 बी, मैत्री विहार
सुपेला,
भिलाई (दुर्ग)- 490023

राजुल-गीत

श्रीपाल जैन 'दिवा'

सखी री दुपहर शाम हुई।
सखी री दुपहर शाम हुई।
कर्मकालिमा या पुण्योदय, मैं तो छुई मुई।
कंचन-काया भाव-भवन पर, कब अभिराम हुई।
छवि का गौरव सूर्य बुझा पर, आतम चमक हुई।
यही शाम सच्चा सूरज बन, कैसे उदित हुई।
स्वानुभूति कर निज चिंतन की, गहरी नींव हुई।
आत्म ज्ञान का भव्य-भवन अब, समता उदित हुई।
राजुल तू तो है निर्दोष।

●

सखी री तू है छवि रसकोष।
सन्दल गात सुगन्ध वेदना, चिति बस राग-रोष।
मुख मण्डल नासिका नयन लख, उपजा रागन होश।
छवि आभा वर्षण देहरी पर, चैत्र हुआ है पौष।
कनक-कलश रस भर अम्बर मिल, अन्तर अमल अदोष।
ममता को समता पी जावे, नार नार निर्दोष।
सब कुछ पाकर क्या लेना है, समता पूरित कोष।

शाकाहार सदन
एल. 75, केशर कुंज
हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल-3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

डॉ. सन्दीप नारद ''जैन राष्ट्र गौरव'' से सम्मानित

भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के अन्तर्गत कोलकाता में विगत दिनों **दिगम्बर जैन प्रतिभा सम्मान समारोह समिति** ने **इन्दौर** के रसायन वैज्ञानिक **डॉ. सन्दीप आर. नारद** को मधुमेह (डायबिटीज) पर उनके विशिष्ट शोध कार्य के लिए **''जैन राष्ट्र गौरव''** सम्मान साइंस सिटी सभागार में एक गरिमामय समारोह में प्रदान किया ।

सुश्री इन्दु जैन 'जैन राष्ट्र गौरव' से सम्मानित

तीर्थंकर महावीर के छब्बीस सौ वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के उपलक्ष्य में 15 अप्रैल 2002 को कलकत्ता स्थित विज्ञान नगरी (साइंस सिटी) सभागार में सम्पूर्णानन्द संस्कृत-विश्वविद्यालय, वाराणसी में जैन दर्शन विभागाध्यक्ष डॉ. फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी' की सुपुत्री कुमारी इन्दु जैन को रंगमंच कलाकार के रूप में विशेष योगदान के लिए अभिनय, गायन और कार्यक्रम संचालन की विशेष दक्षता के आधार पर 'जैन राष्ट्र गौरव' अलंकरण से सम्मानित किया गया।

शरद जैन राज्य स्तरीय समिति में मनोनीत

शरद जैन सुपुत्र स्व. श्री नन्नूमल जी जैन (दादा) प्रतिष्ठित समाज सेवी का मनोनयन भगवान महावीर 2600 वाँ जन्म महोत्सव उच्च राज्यस्तरीय समिति में सदस्य के रूप में हुआ है, इनके मनोनयन पर समाज से प्रबुद्धजन श्री मुकेश चौधरी, श्री सन्मत जैन, श्री कबूलचन्द्र जैन, श्री विजय जैन, श्री चन्द्रसेन जैन तथा डॉ. नरेन्द्र जैन ने इन्हें बधाई दी।

श्री सरल की कृति अँग्रेजी में अनुवादित

जबलपुर । देश के आठ महान जैन संतों की जीवनी लिखने वाले विख्यात कथाकार श्री सुरेश सरल की अब तक 19 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें से एक का गुजराती अनुवाद और एक का मराठी अनुवाद दस वर्ष पूर्व प्रकाश में आ चुका है। हाल ही में उनकी एक जीवनी-पुस्तक 'महायोगी-गुप्तिसागर' का 156 पृष्ठीय अँग्रेजी संस्करण सामने आया है। प्रस्तुत जीवनी का अँग्रेजी अनुवाद सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् डॉ. सुनीता जैन (आई.आई.टी., दिल्ली) ने किया है, जिसकी विद्वान पाठकों द्वारा भारी सराहना की जा रही है।

विद्वत् परिषद् के अध्यक्ष को गोम्मटेश्वर पुरस्कार

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के जैनदर्शन विभागाध्यक्ष एवं अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी' को कर्नाटक के विश्वविख्यात जैन तीर्थ श्रवणबेलगोल में तीर्थंकर महावीर के छब्बीस सौ वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में विशाल स्तर पर आयोजित समारोह में गोम्मटेश्वर विद्यापीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

अपभ्रंश के सद्य: प्रकाशित दो ग्रन्थ पुरस्कृत

'पज्जुण्णचरिउ' तेरहवीं सदी का एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, जिसके लेखक हैं महाकवि सिंह। यह अपभ्रंश भाषा का एक आलंकारिक महाकाव्य है। इसका सम्पादन वीर कुँवरसिंह विश्वविद्यालय में सेवान्तर्गत म.म. महिला कॉलेज, आरा की प्रोफेसर एवं हिन्दी-विभाग की अध्यक्ष, अनेक पाण्डुलिपियों की सम्पादिका और अनेक ग्रन्थों की यशस्वी लेखिका प्रो. डॉ. विद्यावती जैन, आरा (बिहार) ने किया है।

इस ग्रन्थरत्न का मूल्यांकन कर अपभ्रंश अकादमी, जयपुर ने उन्हें स्वयम्भू पुरस्कार से पुरस्कृत किया है, जिसमें 21001 रुपयों की नगद राशि, शाल, श्रीफल एवं मुक्ताहार द्वारा साहित्यकार को सार्वजनिक रूप से सम्मानित किया जाता है।

दूसरा प्रकाशित अपभ्रंश ग्रन्थ है - पुण्णासवकहकोसु। प्रस्तुत ग्रन्थ के मूल लेखक हैं महाकवि रइधू, जिन्होंने अपभ्रंश प्राकृत एवं प्राचीन हिन्दी में लगभग 30 ग्रन्थों की रचना की।

इसका प्रथम बार सम्पादन राष्ट्रपति सहस्राब्दी पुरस्कार से सम्मानित तथा प्राच्य पाण्डुलिपियों के मर्मज्ञ और अनेक ग्रन्थों के लेखक प्रो. डॉ. राजाराम जैन, आरा (बिहार) ने किया है। उनके लगभग 20 वर्षों के अथक परिश्रम का ही सुपरिणाम है उक्त ग्रन्थ का सम्पादन-प्रकाशन। इसका नयनाभिराम प्रकाशन परमपूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी की प्रेरणा तथा ब्रह्म. शान्तिकुमार जी के सार्थक प्रयत्न से उनके परम भक्त श्रीमान् लाला शिखरचन्द्र जी जैन द्वारा जैन साहित्य संस्कृति संरक्षण समिति, दिल्ली द्वारा किया गया।

इस महनीय ग्रन्थ की सर्वत्र चर्चा हो रही है। इसका मूल्यांकन भी जयपुर की अपभ्रंश अकादमी ने इसी वर्ष किया है तथा उसने उसे सन् 2001 के महावीर पुरस्कार से पुरस्कृत एवं सम्मानित किया है। इस पुरस्कार में भी 21001/-रुपये नकद तथा शाल, श्रीफल एवं मुक्ताहार द्वारा उसके सम्पादक का सार्वजनिक सम्मान किया जाता है।

उक्त दोनों साहित्यकारों का सम्मान 27 अप्रैल 2002 को दोपहर में श्रीमहावीर जी (जयपुर) के गम्भीरा नदी के तट पर वार्षिक मेले के शुभावसर पर पूज्यचरण मुनिराज क्षमासागर जी के सान्निध्य में लगभग 50000 नर-नारियों के मध्य किया गया।

बीना में पूजन प्रशिक्षण शिविर

भगवान महावीर स्वामी की 2600 वीं जन्म जयन्ती के पावन प्रसंग पर अनेकान्त ज्ञानमंदिर शोधसंस्थान, बीना द्वारा आयोजित प्रशिक्षण शिविर की शृंखला में पंचम शिविर श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर बीना-इटावा में आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिविर का शुभारम्भ 8 मई को प्रातः एक विशाल धर्मसभा के मध्य शिविर प्रशिक्षक एवं निर्देशक ब्र. संदीप जी 'सरल' के कुशल मार्गदर्शन में महावीराष्टक स्तोत्र के सामूहिक गान के मंगलाचरण से हुआ। दीप प्रज्वलन श्री विभव कुमार कोठिया ने किया। शिविर के सम्यक् संचालन हेतु एक समिति का गठन किया गया था। शिविर में 350 शिविरार्थियों ने अपना नामांकन कराया था। सभी शिविरार्थियों को अकलंक वर्ग, चन्दनबाला वर्ग एवं मैनासुन्दरी वर्ग में विभाजित किया गया था।

पूजन प्रशिक्षण के दौरान सभी शिविरार्थियों ने स्वस्तिक का विज्ञान, ऊँ, ह्रीं, श्री बीजाक्षरों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण, पूजा प्रतिज्ञा पाठ का रहस्य एवं मूलपरक अर्थ, चौंसठ ऋद्धियों का स्वरूप, पूजनों का अर्थ, शांतिपाठ का अर्थ, पूजक, पूज्य, पूजा की विधि और पूजा का फल, पूजन के भेद, पूजन के अंगों की चर्चा आदि के रहस्यों को सुनकर शिविरार्थियों ने अनुभव किया कि अनेक वर्षों से पूजन करने वाले पुजारी भी इन रहस्यों से अनभिज्ञ थे। प्रतिदिन रात्रिकालीन प्रवचन भी पूजन के स्वरूप को लेकर हुआ करते थे। इस प्रकार यह प्रशिक्षण 17 मई तक सानंद सम्पन्न हुआ।

भगवान महावीर पर भारत व नेपाल में नये सिक्के जारी

भगवान महावीर के 2600 वें जन्मकल्याणक के उपलक्ष्य में अप्रैल 2002 माह में भारत सरकार और नेपाल सरकार द्वारा विशेष सिक्के जारी किये गये हैं।

भारत सरकार द्वारा 5 रुपये का विशेष सिक्का 25 अप्रैल 2002 को जारी किया गया है। सिक्के के एक ओर जैन प्रतीक बना है, जबकि दूसरी ओर भारत का राष्ट्रीय प्रतीक सम्राट अशोक की लाट तथा कीमत 5 रुपये अंकित है।

नेपाल सरकार द्वारा 13 अप्रैल 2002 को काठमाण्डू में आयोजित एक भव्य समारोह में भगवान महावीर के 2600 वें जन्मकल्याणक पर एक सिक्का जारी किया गया है। यह सुंदर सिक्का 250 नेपाली रुपये का है।

पंजाब सरकार की ओर से पंजाब स्माल इंडस्ट्रीज एण्ड एक्सपोर्ट कारपोरेशन लिमिटेड, चंडीगढ़ द्वारा भी महावीर जंयती पर सोने व चाँदी के एक-एक सिक्के जारी किये गये हैं। ये सिक्के करेंसी के रूप में प्रचलन योग्य नहीं है, लेकिन संग्रहणीय हैं। ये सिक्के बहुत ही सुंदर टैम प्रूफ पेकिंग में जारी किये गये हैं। पैकिंग फोल्डर पर एम.एम.टी.सी. द्वारा शुद्धता का प्रमाण पत्र भी हस्ताक्षरित किया हुआ है।

भारत सरकार द्वारा शीघ्र ही भगवान महावीर के 2600 वें जन्म कल्याण की स्मृति में 100 रुपये और 50 रुपये के अप्रचलित सिक्के भी जारी किये जा रहे हैं, जो केवल कलेक्टर्स पैक में ही बिक्री किये जावेंगे।

महावीर जयंती पर विशेष लिफाफा व डाक मोहर जारी

भगवान् महावीर के 2600 वें जन्मकल्याणक के उपलक्ष्य में महावीर जयंती पर 25 अप्रैल 2002 को अजमेर में एक विशेष लिफाफा जारी हुआ तथा भारतीय डाक विभाग द्वारा एक विशेष मोहर लगाई गई। इस सुंदर बहुरंगी विशेष लिफाफे पर अजमेर में स्थित सोनी जी की नसियां के नाम से सुप्रसिद्ध श्री दिगम्बर जैन सिद्धकूट मंदिर परिसर का चित्र अंकित है। रायबहादुर सर सेठ मूलचंद नेमीचंद सोनी द्वारा लाल पत्थर से निर्मित भगवान ऋषभनाथ के मंदिर की प्रतिष्ठा 26 मई 1865 को हुई थी। इस मंदिर के पीछे एक विशल भवन बनाकर सन् 1895 में इसमें भगवान ऋषभनाथ के पाँचों कल्याणकों की सुंदर स्वर्ण रचित रचना की गई। सोने के वर्कों से मण्डित इस विशाल रचना को देखने दूर-दूर से श्रद्धालु आते हैं। सन् 1953 में यहाँ 82 फुट ऊँचे मानस्तम्भ का निर्माण किया गया।

इस विशेष लिफाफे पर महावीर जयंती को डाक विभाग द्वारा लगाई गई विशेष मोहर पर दिगम्बर जैन मुनिराज के दर्शन करता भक्त दर्शाया गया है और ''बलिहारी गुरुदेव की'' शब्द अंकित है। श्री दिगम्बर जैन सिद्धकूट चैत्यालय मंदिर ट्रस्ट के सौजन्य से अजयमेरु फिलाटेलिक सोसायटी द्वारा जारी इस स्पेशल कव्हर और स्पेशल कैशिलेशन को तैयार करने व भारतीय डाक विभाग से जारी कराने में अजमेर के श्री अनिल कुमार जैन एवं श्री पदम कुमार जैन का विशेष सहयोग रहा है।

सुधीर जैन
यूनिवर्सल केबिल्स लिमिटेड,
सतना (म.प्र.)-485005

प्रवेश सूचना

श्रमण ज्ञान भारती, चौरासी (मथुरा) का द्वितीय सत्र 1 जुलाई, 2002 से प्रारम्भ होने जा रहा है। पू. आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के मंगल आशीर्वाद एवं उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज की प्रेरणा से यह छात्रावास पिछले वर्ष प्रारम्भ हुआ था। इसमें अभी प्रथम वर्ष में 13 छात्र लिये गये थे। इस वर्ष 15 छात्रों को प्रवेश देने की योजना है। छात्रावास के नवीन भवन का शिलान्यास हो चुका है। शीघ्र ही भवन तैयार हो जायेगा।

छात्रावास में हाईस्कूल में कम-से-कम 55 प्रतिशत प्राप्तांक प्राप्त करने वाले छात्रों को प्रवेश दिया जायेगा। इन छात्रों को कॉलेज में कामर्स की शिक्षा मिलेगी तथा छात्रावास में जैन सिद्धान्त के प्रमुख ग्रन्थों का अध्ययन कराया जायेगा। छात्रावास में निवास, भोजन, परीक्षा शुल्क, किताबें, कुर्ता-पजामा की अध्ययन ड्रेस निःशुल्क उपलब्ध कराई जाती है।

जिन छात्रों को छात्रावास में प्रवेश लेना हो, वे सादे कागज पर प्रार्थना-पत्र लिखकर भिजवा दें। प्रार्थना-पत्र के साथ अपनी हाईस्कूल (10 वीं कक्षा) की मार्कशीट तथा अपना एक फोटो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिपकाकर भिजवायें। यदि 10 वीं कक्षा की मार्कशीट न आ सकी हो तो कक्षा 9 की मार्कशीट लगाकर भेजें। प्रार्थना-पत्र मिलने पर साक्षात्कार के लिये बुलाया जावेगा और छात्रों का चयन किया जायेगा। प्रार्थना-पत्र 31 मई 2002 से पूर्व मिल जाने चाहिये। प्रार्थना-पत्र निम्न पते पर भिजवायें।

निरंजन लाल बैनाड़ा
अधिष्ठाता - श्रमण ज्ञान भारती
1/205, प्रोफेसर कॉलोनी,
आगरा-282002 फोन - 0562-351452

अ.भा. प्रश्नमंच स्पर्द्धा में डॉ. जैन को स्वर्ण पदक

छतरपुर। भगवान महावीर की 2600 वीं जयंती के विशिष्ट अवसर पर सम्पन्न अखिल भारतीय प्रश्नमंच स्पर्द्धा में सर्वाधिक प्रश्नों के सही उत्तर देने पर महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर में वाणिज्य सहा. प्राध्यापक डॉ. सुमति प्रकाश जैन को स्वर्णपदक अथवा 2501 रुपये के नकद पुरस्कार का विजेता घोषित किया गया है।

राजेश बड़कुल
मंत्री, जैन समाज, छतरपुर (म.प्र.)

जैन धर्मावलम्बियों को अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता

सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई 2 अप्रैल से

जैन समाज से विनम्र अपील

जैन धर्म एक स्वतंत्र एवं सनातन धर्म हैं। जैनियों की पूजा पद्धति, गुरु, ग्रन्थ, त्याग, तपस्या व संस्कृति सभी मान्यताएँ भिन्न हैं। जैन धर्म और हिन्दू धर्म अलग संस्कृति से पोषित हैं। जैन धर्म हिन्दू धर्म से भिन्न है, इस संबंध में विभिन्न विद्वानों एवं राजनेताओं ने भी अपने स्पष्ट मत एवं विचार व्यक्त किये हैं। विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा भी जैन समुदाय को धर्म, भाषा व लिपि के आधार पर हिन्दुओं से अलग मानते हुए अल्पसंख्यक मानने के पक्ष में निर्णय दिये हैं तथा कुछ राज्यों में जैन समुदाय को अल्पसंख्यक भी घोषित किया गया है। लेकिन भारत सरकार द्वारा जैन धर्मावलम्बियों को अल्पसंख्यक के रूप में मान्यता न देना भारतीय संविधान का स्पष्ट उल्लंघन ही नहीं, अपितु जैन समाज के साथ घोर अन्याय भी है।

जैसा कि आपको विदित होगा कि यह मामला सुप्रीम कोर्ट में भी विचाराधीन है। सुप्रीम कोर्ट में लम्बित इस मामले की अब प्रतिदिन सुनवाई दिनांक 2 अप्रैल, 2002 से प्रारंभ हो रही है। गत 30 वर्षों में यह पहली बार हो रहा है कि इस मामले की सुनवाई हो रही है। 11 सदस्यीय संविधान पीठ इस मामले की सुनवाई करेगी।

भारत सरकार ने बौद्धों, सिखों को स्वयं अपने निर्णय से अल्पसंख्यक घोषित किया है, सिर्फ जैनियों को जानबूझ कर अल्पसंख्यक घोषित नहीं किया है, क्योंकि सरकार जैन धर्म को हिन्दू धर्म का अंग बनाना चाहती थी। इस उद्देश्य से सन् 1992 में तत्कालीन सरकार ने जैन धर्म को अल्पसंख्यक समुदाय की सूची से निकाल दिया था उसी दिन से भारत की सभी जैन शिक्षण संस्थाएँ, जो पहले अल्पसंख्यक संस्था के रूप में मान्यता प्राप्त थीं, उनकी मान्यता समाप्त कर दी गई।

जैन धर्म के अस्तित्व की रक्षा के लिये जैन धर्मावलम्बियों को अल्पसंख्यक समुदाय की मान्यता मिलना अत्यंत आवश्यक है। दिनांक 9.1.97 को नई दिल्ली में राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष ने जैनियों को अल्पसंख्यक वर्ग में शामिल करने की घोषणा की थी, तदनुसार तत्कालीन केन्द्रीय सरकार उचित कार्यवाही करने जा रही थी। इसी दौरान किसी हिन्दू संगठन द्वारा याचिका दायर करने के कारण सुप्रीम कोर्ट ने इस पर स्टे लगा दिया था।

उक्त केस में जैन समाज को अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिये एक बड़ी कानूनी लड़ाई लड़नी है। जैन समाज की सभी संस्थाएँ मिलकर इस केस को लड़ रही हैं और इस कार्य में काफी रुपये खर्च होने का अनुमान है।

समाज से निवेदन है कि इस कार्य में अपने-अपने नगर, ग्राम एवं क्षेत्र से अपनी यथासंभव सहयोग राशि श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा चेरिटेबल ट्रस्ट के नाम से ड्राफ्ट द्वारा अध्यक्ष 'श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा चेरिटेबुल ट्रस्ट' 1506, मोदी का टावर, 98 नेहरू प्लेस, नई दिल्ली -110019, फोन-आ. 6293824, 6419476, निवास-4992436,6292669 फैक्स - 6470895, मो. 9868145132 के पते पर भिजवाने की कृपा करें।

निर्मल कुमार जैन (सेठी)
अध्यक्ष
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन
(धर्म संरक्षिणी) महासभा

मृत्यु महोत्सव के साक्षी बने हजारों नेत्र

सागर। जैन सिद्धांत में मरने की कला को एक महोत्सव के रूप में देखा जाता है। जीने के साथ धैर्यपूर्वक मरण की कला केवल जैनाचार्यों द्वारा ही सीखी जा सकती हैं। जीवन भर संयम की आराधना करते हुए अपने अंतिम समय में भी वीरतापूर्वक संयमाराधना करते हुए इस देह के त्याग करने को सल्लेखना (समाधि) कहा जाता है। इसको स्पष्ट करते हुए भगवती आराधना में आचार्य शिवार्य महाराज ने कहा-

धीरेण वि मरिदव्वं विद्धीरेण वि अवस्स मरिदव्वं।
जदि दोण्हि वि मरिदव्वं वरं ही धीरत्रणेण मरिदव्वं॥

धीर भी मरण को प्राप्त होता है, अधीर भी मरण को प्राप्त होता है जब दोनों ही मरण के प्राप्त हो हैं तो अच्छा है कि धीरता के साथ मरण किया जायें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ की इन पंक्तियों को अपने जीवन में चरितार्थ किया श्रीमति बसंती बाई जैन ने जो स्व. श्री गोपीलाल जी जैन की धर्मपत्नी है। असाध्य रोग से पीड़ित होने के बाद जब उसका कोई निदान न हो सका तब अपने जीवन के अंतिम समय में आपकी भावना समाधीपूर्वक मरण करने की रही। यह पुण्योदय ही था कि यहाँ मोराजी में परमपूज्य प्रज्ञाश्रमण श्री विरागसागर जी ससंघ विराजमान थे। आपकी भावना के अनुरूप परिजनों ने जब आचार्य श्री से माँ की समाधि हेतु निवेदन किया तब अपनी वात्सल्यपूर्ण दृष्टि करते हुए आपने तुरंत उन्हें अपनी शरण में लाने का आदेश दिया।

तब आपको परिजन पू. आचार्य श्री के पास लेकर आये। चैतन्य अवस्था में श्रीमती बसंतीबाई जैन ने आचार्य श्री को 'नमोऽस्तु' करते हुए श्रीफल चढ़ाकर अपनी समाधि हेतु प्रार्थना की, जिसे स्वीकार करते हुए आचार्य श्री ने अपना आशीर्वाद प्रदान किया एवं घर परिग्रह आदि का त्याग कराते हुए दसमीं प्रतिमा के व्रत देकर समाधि हेतु आशीर्वाद प्रदान किया। रात्री में स्वास्थ्य अधिक गिर जाने पर सभी परिजनों के अनेकों अनुरोध करने पर माँ जी की भावना के अनुरूप आचार्य श्री ने आपको क्षुल्लिका दीक्षा देते हुए पिच्छी एवं कमण्डल प्रदान किया। क्षुल्लिका विनिर्गता श्री माताजी का नामकरण किया गया। दीक्षा के इस दुर्लभ दृश्य को देखते हुए सभी की आँखों में प्रक्षलता के आँसू थे। नामकरण किये जाते ही सभी ने जयकारा लगाते हुए हर्ष प्रगट कर इस दुर्लभ सल्लेखना की अनुमोदना की।

ज्ञात है कि लगभग 68 वर्ष की उम्र को प्राप्त बसंती बाई जैन (स्व. श्री गोपीलाल जैन) सुभाषनगर, शास्त्री वार्ड की निवासी है। आपका पूरा जीवनकाल धर्म-साधना से युक्त रहा है। आप लगातार व्रत नियमों का पालन करते हुए समाधि की कामना करती थी। आपके परिवार में तीन पुत्र एवं चार पुत्रियाँ हैं जो सभी के सभी माँ द्वारा दिये गये धार्मिक संस्कारों से संस्कारित है।

प.पू. आचार्य विरागसागर जी महाराज द्वारा सल्लेखना व्रत दिये जाते हैं चतुर्विध संघ उनकी यथायोग्य वैय्यावृत्ति कर रहा है। अनेकों लोग वैराग्य के इस दृश्य को देखकर यह भावना करते हैं कि उनके जीवन में भी यह मृत्यु-महोत्सव प्राप्त हो।

दिनाँक १०.६.२००२ मंगलवार को पूर्व चैतन्य अवस्था में समाधिपाठ सुनते हुए रात्री 9.30 पर आपका स्वर्गवास हुआ। प्रात: 11 को पूर्ण विधि-विधान के साथ जुलूस के रूप में अंतिम संस्कार किया गया। संपूर्ण विधि-विधान संधान्य ब्र. पंकज, सागर ने संपन्न कराये।

ब्र. पंकज

सागर (म.प्र.) में सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर सम्पन्न

सागर। प्रज्ञाश्रमण 108 आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज के चतुर्विध संघ के सान्निध्य में 9.5.02 से 15.6.02 तक आयोजित ग्रीष्मकालीन शिक्षण शिविर श्रुतपंचमी पर विभिन्न समारोहों के साथ सम्पन्न हुआ।

सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर में प्रात: 7 से 8 बजे तक तत्त्वार्थराजवार्तिक का शिक्षण कार्य शिविर के कुलपति पं. दयाचंद जी साहित्याचार्य एवं उपकुलपति पं. मोतीलाल जी व्याकरणाचार्य द्वारा कराया जाता था। प्रात: 8 से 9.30 तक भक्तिकाव्य भक्ताम्बर जी पर पू. आचार्य विरागसागर जी महाराज द्वारा सरल, सरस शैली में प्रवचन दिये जाते थे। आहार चर्चा, शंका समाधान के पश्चात् दोपहर में 3 से 4 बजे तक आलाप पद्धति एवं 4 से 5 बजे तक सम्यग्दर्शन (आचार्य विरागसागर जी द्वारा लिखित शोधालेख) का वाचन होता था। सायंकाल गुरुभक्ति संपन्न होने के बाद रात्रि 7 से 8 बजे तक संघस्थ ब्र. पंकज द्वारा छहढाला एवं संघस्थ ब्र. दीदी पिंकी, नीतू द्वारा बच्चों के लिए बाल विज्ञान भाग एक एवं दो की कक्षाएँ ली जाती थी।

विद्यावयोवृद्ध मनीषी पं. नाथूराम जी डोंगरीय सम्मानित

सुप्रसिद्ध अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी में महावीर जयंती के सार्वजनिक मेला समारोह के अवसर पर दि. 27.4.2002 को समयसार वैभावादि कृतियों तथा 'जैन धर्म : विश्वधर्म' जैसे प्रभावक ग्रंथों के लेखक श्री पं. नाथूराम जी डोंगरीय, इंदौर को उनकी सद्य: लिखित कृति 'समीचीन सर्वधर्म सोपान' के उपलक्ष्य में श्री जैन विद्या संस्थान, महावीर जी द्वारा प्रदत्त उसके संयोजक डॉ. कमलाचन्द जी सोगानी एवं क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष तथा समस्त पदाधिकारियों द्वारा तिलक लगाकर मुक्ताहार, शाल, प्रशस्ति-पत्र एवं नगद राशि भेंट कर सम्मानित किया गया।

परमपूज्य मुनिराज १०८श्री क्षमासागर जी महाराज के सान्निध्य एवं हजारों की संख्या में उपस्थित जनता के समक्ष यह पुरस्कार ब्र. पूर्णचंद रिद्धिलता लुहाड़िया के नाम से प्रस्तुत किया गया।

सुरेन्द्र कुमार जैन

- अर्थ और परमार्थ की दृष्टि का अन्तर तो देखिए! वही भरत प्रभु आदिनाथ के चरणों में रत्न चढ़ाता है और वही भरत छोटे भैया बाहुबली के ऊपर चक्ररत्न चलाता है।
- मन्दिर और मूर्तियाँ हमारी आस्था-निष्ठा के केन्द्र हैं, जहाँ हम अपनी भक्ति-भावनाओं को प्रदर्शित कर सकते हैं।

'सागर बूँद समाय' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रन्थ दशा में ही अहिंसा पलती है

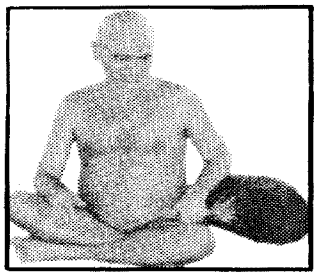

आचार्य श्री विद्यासागर जी

संयम के बिना आदमी नहीं
यानी
आदमी वही है
जो यथा-योग्य
सही आ.....दमी है
हमारी उपास्य-देवता
अहिंसा है
और
जहाँ गाँठ-ग्रन्थि है
वहाँ निश्चित ही
हिंसा छलती है
अर्थ यह हुआ कि
ग्रन्थि हिंसा की सम्पादिका है
और
निर्ग्रन्थ दशा में ही
अहिंसा पलती है,
पल-पल पनपती,
..... बल पाती है।
हम निर्ग्रन्थ-पन्थ के पथिक है
इसी पन्थ की हमारे यहाँ
चर्चा-अर्चा-प्रशंसा
सदा चलती रहती है

(मूकमाटी से साभार)

नमोऽस्तु

ठण्ड

सरोज कुमार

मुनिश्री तुम परीक्षा दे रहे हो
और मैं परीक्षा में बिना बैठे ही
इतरा रहा हूँ
मानों गोल्ड मेडल मिल गया हो

ठण्ड तुम्हारी परीक्षा लेने आती है
और तुम्हारी तैयारी देख-देख
पराजित
ठगी-ठगी
प्रणाम कर लौटती हुई
मुझे खोजती है!

और सारी कसर
मुझसे निकालकर
विजय पताका फहराती हुई
हिमालय में समा जाती है!

'मनोरम'
37, पत्रकार कालोनी
इन्दौर- 452001

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खाद्य पदार्थों पर चिह्न बनाना अनिवार्य

केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा 'भारत के राजपत्र' (असाधारण, 20 दिसम्बर 2001) में सा. का. नि. 908(अ) क्रमांक पर अधिसूचना प्रकाशित कराई गई है, जो 'खाद्य अपमिश्रण निवारण (नवां संशोधन) नियम, 2001' नामक नियम शाकाहारी खाद्य पदार्थों से संबंधित है। इसमें 'शाकाहारी खाद्य' को भी परिभाषित किया गया है। इसके अनुसार अब शाकाहारी खाद्य के प्रत्येक पैकेज पर खाद्य पदार्थ के नाम या ब्राण्ड नाम के बिल्कुल निकट मुख्य प्रदर्शन पैनल पर हरे रंग (ग्रीन कलर) से प्रतीक चिह्न बनाया जायेगा। **वृत्त के व्यास से दुगने किनारे वाली हरे रंग (ग्रीन कलर) की बाह्य रेखा वाले वर्ग के भीतर हरे रंग से भरा हुआ वृत्त बनाया जाएगा,** जिसके कारण वह खाद्य पदार्थ शाकाहारी खाद्य है, यह जाना-समझा जा सकेगा। 20 जून 2002 से प्रभावशाली होने वाले इस नियम में यह प्रतीक चिह्न [●] हरे (ग्रीन कलर) से बनाया जाएगा।

स्मरणीय है कि इससे पहले केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली ने 'भारत के राजपत्र' (असाधारण, 4 अप्रैल 2001) में सा. का. नि. 245 (अ) अधिसूचना प्रकाशित कराई थी। इस अधिसूचना में 'खाद्य अपमिश्रण निवारण (चौथा संशोधन) नियम, 2000' रूप में 'मांसाहारी खाद्य' पदार्थ को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया गया था कि "जिसमें एक संघटक के रूप में पक्षियों, ताजे जल अथवा समुद्री जीव-जन्तुओं अथवा अंडों सहित कोई समग्र जीव-जन्तु या उसका कोई भाग अथवा जीव-जन्तु मूल का कोई उत्पाद अन्तर्विष्ट होगा तो वह 'मांसाहारी खाद्य' माना जाएगा, किन्तु इसके अन्तर्गत दूध या दूध से बने हुए पदार्थों को मांसाहारी खाद्य नहीं माना जावेगा।" वह पदार्थ मांसाहारी खाद्य है, इस हेतु प्रत्येक पैकेज पर खाद्य पदार्थ के नाम या ब्राण्ड नाम के बिल्कुल नजदीक मुख्य प्रदर्शन पैनल पर **वृत्त के व्यास से दुगने किनारे वाली बाह्य रेखा वाले वर्ग के भीतर एक वृत्त [●] होगा, जो भूरे रंग (ब्राउन कलर) का होगा।**

ध्यातव्य है कि आम उपभोक्ता वर्ग को खाद्य पदार्थ खरीदते समय अब मांसाहारी खाद्य पदार्थ पर भूरे रंग (ब्राउन कलर) वाला तथा शाकाहारी खाद्य पदार्थ पर हरे रंग (ग्रीन कलर) वाला प्रतीक चिह्न देखकर खरीददारी करनी होगी। दोनों प्रकार के खाद्य पदार्थों पर प्रतीक चिह्न [●] एक-सा ही बना होगा, मात्र भूरे रंग (ब्राउन कलर) एवं हरे रंग (ग्रीन कलर) की भिन्नता ही उनके मांसाहारी या शाकाहारी खाद्य होने का अंतर करा सकेगी।

मांसाहारी या शाकाहारी खाद्य पदार्थों में यह प्रतीक चिह्न मूल प्रदर्शन पैनल पर विषम पृष्ठभूमि वाले पैकेज पर तथा लेबलों, आधानों (कन्टेनर्स), पम्पलेट्स, इश्तहारों या किसी भी प्रकार के प्रचार माध्यम आदि के विज्ञापनों में उत्पाद के नाम अथवा ब्राण्ड नाम के बिल्कुल नजदीक प्रमुख रूप से प्रदर्शित करना होगा। विनिर्माता, पैककर्ता अथवा विक्रेता को प्रचार माध्यमों में 100 सें.मी. वर्ग तक 3 मि.मी. न्यूनतम व्यास आकार वाले; 100 से 500 सें.मी. वर्ग तक 4 मि.मी., 500 से 2500 सें.मी. वर्ग तक 6मि.मी. एवं 2500 सें.मी. वर्ग से ऊपर मूल प्रदर्शन पैनल क्षेत्र वालों पर 8मि.मी. न्यूनतम व्यास आकार वाले प्रतीक चिह्न का निर्माण उचित स्थान पर कराना होगा।

उपभोक्ता वर्ग से अपेक्षा की जाती है कि खाद्य पदार्थ खरीदते समय इस भूरे रंग (ब्राउन कलर) या हरे रंग (ग्रीन कलर) वाले प्रतीक चिह्नों को देखकर ही खाद्य पदार्थ खरीदें। जिन उत्पादकों आदि ने ये चिह्न अपने उत्पादों पर नहीं बनाये हों, उन्हें चेतावनी देवें तथा सक्षम अधिकारियों को भी अपनी शिकायत दर्ज कराकर अपने अधिकारों की सुरक्षा किये जाने की माँग प्रस्तुत करें। साथ ही केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, 150-ए, निर्माण भवन, नई दिल्ली के पते पर लिखकर मांसाहारी एवं शाकाहारी खाद्य पदार्थों पर रंगों की भिन्नता के बावजूद भी चिह्न की समानता होने से उपभोक्ता वर्ग के भ्रमित होने की संभावना का ज्ञान कराते हुए 'मांसाहारी खाद्य' (NON VEGETARIAN FOOD) या शाकाहारी खाद्य (VEGETARIAN FOOD) हिन्दी/अंग्रेजी में भी प्रतीक चिह्न के साथ ही अनिवार्य रूप से लिखे जाने की माँग प्रेषित करें।

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-I, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205 प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा - 282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org